संपादकीय

पुलिस विज्ञान त्रैमासिक पत्रिका का अप्रैल-जून, 2008 का अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। जैसा कि संपादक मंडल का यह प्रयास रहता है कि पत्रिका में पुलिस, न्यायालयिक विज्ञान व अन्य संबंधित विषयों की प्रामाणिक व प्रासंगिक जानकारी प्रदान की जाए। अतः अपराधों को सुलझाने में पुलिसकर्मियों द्वारा किस प्रकार की कार्य प्रणाली अपनाई जाए, अपराधों से निपटने तथा अपराध होने की संभावनाओं से संबंधित कुछ ओजस्वी विचार तथा प्रैस की भूमिका पर वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों तथा समाज के कुछ प्रबुद्ध वर्ग द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं जो आम पुलिस-कर्मी के साथ सभी वर्ग के लिए उपयोगी होते हैं।

इस अंक में इस बार पुलिस-कर्मियों के लिए **भारतीय पुलिस और 'कार्य संस्कृति', भारत की कारागार व पुलिस व्यवस्था, आतंकवाद—एक ज्वलंत समस्या, घरेलू हिंसा एवं पुलिस की भूमिका, महिला पुलिस, अपराध विश्लेषण में रक्त वर्गीकरण एवं डी.एन.ए की उपयोगिता, और प्रथम पुरस्कार भारत को, भारतीय न्याय—प्रशासन में पुलिस की भूमिका** से संबंधित लेख भी हैं।

पत्रिका के सुधी पाठक पत्रिका को और अधिक सूचनाप्रद व उपयोगी बनाने में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान कर सकते हैं। आशा है कि पत्रिका में सम्मिलित सभी लेख पाठकों को उपयोगी लगेंगे और वे अपने विचारों से संपादक मंडल को अवगत कराते रहेंगे। आपके विचारों का सहर्ष स्वागत है।

दिवाकर शर्मा

संपादक

वर्ष - 25 अंक 103 अप्रैल-जून, 2008

अनुक्रम

भारतीय पुलिस और 'कार्य संस्कृति' 7
• *यशपाल सिंह*

भारत की कारागार व पुलिस व्यवस्था 12
• *डा. के.पी.सिंह, श्रीमती टीना अरोड़ा*

आतंकवाद-एक ज्वलंत समस्या 17
• *राकेश शर्मा निशिथ*

घरेलू हिंसा एवं पुलिस की भूमिका 27
• *विनोद मिश्रा*

महिला पुलिस 34
• *डा. ओमराज सिंह*

अपराध विश्लेषण में रक्त वर्गीकरण एवं डी.एन. ए. की उपयोगिता
• *डा. साहिब सिंह चांदना* 38

....और प्रथम पुरस्कार भारत को 46
• *डा. सुरेन्द्र कटारिया*

भारतीय न्याय—प्रशासन में पुलिस की भूमिका 56
• *ओमप्रकाश दार्शनिक*

38वीं अखिल भारतीय पुलिस सांइस कांग्रेस—एक विवरण 60
• *निदेशक (अनु.एवं.वि.) की कलम से*

समीक्षा समिति के सदस्य

श्री सुनील कुमार गुप्ता, नई दिल्ली
प्रो. एस.पी.श्रीवास्तव, लखनऊ
श्री एस.वी.एम त्रीपाठी, लखनऊ
प्रो. बलराज चौहान, भोपाल
प्रो. एम. ज़ैड. खान, नई दिल्ली
श्री वी.वी.सरदाना, फरीदाबाद
प्रो. अरुणा भारद्वाज, नई दिल्ली
डा. शैलेंद्र कुमार चतुर्वेदी, मेरठ
प्रो. जे.डी. शर्मा, सागर
श्री एस.पी. सिंह पुंडीर, लखनऊ
श्री पी. डी. वर्मा, छत्तीसगढ़
डा. दीप्ति श्रीवास्तव, भोपाल
डा. अरविंद तिवारी, मुंबई
प्रो. स्नेहलता टंडन, नई दिल्ली
डा. उपनीत लल्ली, चंडीगढ़
प्रो. वी.के. कपूर, जम्मू

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं। इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

अक्षरांकन एवं पृष्ठ सज्जा : रचना इंटरप्राइजिज, वी-8, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

भारतीय पुलिस और 'कार्य संस्कृति'

यशपाल सिंह, भा.पु.से.

महानिदेशक, नागरिक सुरक्षा, उ.प्र.
(पूर्व पुलिस महानिदेशक, उ.प्र.)

अगस्त, 27 व 28, 2007 को एन.पी.ए., हैदराबाद में 1972 बैच के आई.पी.एस. अधिकारियों का अंतिम पुनर्मिलन सेमीनार था। लगभग पूरा बैच एकत्रित था। उसमें कई डी.जी. रह चुके थे, कुछ चल रहे थे और कुछ होने वाले थे। सेमिनार में पुलिस के समक्ष चुनौतियों पर विचार हुआ। हर अधिकारी ने जिसे जिस प्रकार के अनुभव से गुजरना पड़ा, अपनी-अपनी बात रखी। 'आई.बी.' और 'रा' से जुड़े अधिकारियों ने 'पुलिस' की तारीफ की, कि उन्होंने इतनी विकट परिस्थितियों में भी बहुत अच्छे परिणाम दिए और देश एक बना रहा। पूर्वोत्तर प्रांतों में कार्यरत अधिकारियों ने कहा कि वहां की स्थिति से वर्तमान कानूनों के अंतर्गत नियमानुसार चल कर नहीं निपटा जा सकता। सी.बी.आई. से जुड़े अधिकारियों ने कानून और विशेषकर भारतीय साक्ष्य अधिनियम में सुधार की आवश्यकता पर बल दिया। दक्षिण भारत में कार्यरत अधिकारी सामान्यतः संतुष्ट थे और पुलिस को तकनीकी रूप से और सशक्त बनाना चाहते थे। पुलिस कमिश्नर के रूप में कार्य कर चुके अधिकारी सिस्टम से संतुष्ट थे उन्होंने विभागीय अधिकारियों-कर्मचारियों को और कार्य कुशल बनाने पर जोर दिया। विदेशों में पुलिसिंग का अनुभव (यू.एन.ओ. आदि) प्राप्त अधिकारी पुलिस में संस्थागत सुधार चाहते थे। उत्तर भारत में कार्यरत अधिकारी राजनैतिक दबाव और राजनीति के अपराधीकरण से चिंतित थे। अंततः बात यही निकलकर आई कि पुलिस विभाग में किसी प्रकार का सुधार तब तक संभव नहीं है जब तक यह विभाग जनता का विश्वास नहीं प्राप्त कर लेता। तभी जन प्रतिनिधि कानून में किसी प्रकार के बदलाव अथवा अधिकारों की बढ़ोत्तरी के लिए राजी होंगे। अतः विभाग के आगे सबसे बड़ा प्रश्न आज यही है कि विभाग आम आदमी से किस प्रकार जुड़ सके, उनका विश्वास और सम्मान पाने लगे और वे इसे अपना सच्चा मित्र और शुभचिंतक समझने लगे।

यह अत्यंत गूढ़ और मौलिक प्रश्न हैं जो समस्या की जड़ तक जाता है। विभाग को इसका उत्तर खोजना ही होगा। तभी ध्यान जाता है विभागीय 'कार्य संस्कृति' पर। आखिर यह 'संस्कृति' है क्या? आज वैश्वीकरण के युग में देशों की संस्कृतियों के परिप्रेक्ष्य में समस्याओं की विवेचना की जा रही है। कुछ लोग भविष्य में 'संस्कृतियों के टकराव' की बात करते हैं विशेष रूप से इंग्लैंड और यूरोप में आतंकवादी घटनाओं के लिए 'संस्कृति' को जिम्मेदार मानते हैं। विद्वान संस्कृति को किन-किन रूपों में परिभाषित करते हैं इसकी गूढ़ विवेचना से कुछ समय के लिए दूर रहकर अगर एक आम आदमी की नजर से 'संस्कृति' को देखा जाए तो मेरे विचार से "यह वह अदृश्य शक्ति है जो व्यक्ति के सोच, विचार और आचरण को दिशा देती है।" यह संस्कृति किसी देश, किसी जाति, किसी धर्म समूह, संगठन और यहां तक की किसी परिवार तक की भी हो सकती है। वह संगठन अथवा समूह अपनी संस्कृति द्वारा निर्धारित अदृश्य मर्यादा की सीमाओं में बंधे रहकर अपना कार्य करता है। इस 'संस्कृति' का असर उसके न्यूनतम इकाई (व्यक्ति विशेष) तक रहती है और उसके दिन प्रतिदिन के छोटे-बड़े हर क्रियाकलाप में इसका असर देखा जा सकता है।

अमरीका के दो अर्थशास्त्री रेमण्ड फिसमैन व इडवर्ड मिगूल ने 1997-2002 तक के कुल 5 सालों के संयुक्त राष्ट्र संघ के न्यूयार्क स्थित राजनयिकों के ट्रैफिक चालान

का विवरण प्राप्त किया तो पाया कि जो देश भ्रष्टाचार की श्रेणी में ऊपर थे जैसे—कुवैत, मिस्र, सूडान आदि उन्हीं के राजनयिकों ने अधिकतम ट्रैफिक नियम तोड़े जब कि स्वीडन के किसी राजनयिक ने एक भी बार नियम नहीं तोड़ा। ज्ञातव्य है कि स्वीडन में भ्रष्टाचार न्यूनतम है। 'राजनयिक सुरक्षा' प्राप्त होने के कारण यद्यपि आर्थिक दण्ड किसी को नहीं देना था बस यह एक व्यवहार के दृष्टिकोण की बात थी।

विदेशी सहायता देने वाली संस्थाओं से जुड़े वरिष्ठ कार्यकर्ता श्री हैरिसन ने वर्षों तक इस बात का अध्ययन किया कि किसी देश की संस्कृति किस प्रकार उस देशवासियों के आचरण को प्रभावित करती है। उसका विश्वास था इसी 'प्रभाव' के कारण एक देश के लोग थोड़े सहयोग मात्र से तरक्की कर जाते हैं जबकि दूसरे देश के लोग, दो गुना सहयोग के बाद भी एक पायदान भी ऊपर नहीं चढ़ पाते हैं और यह संस्कृति साल दो साल अथवा दशकों तक में नहीं बनती, इसके बनने में शताब्दियां लग जाती हैं। वर्तमान भारतीय पुलिस संस्कृति का भी निर्माण सदियों के इसके कार्य पद्धति और समानान्तर राजनैतिक, सामाजिक दबाव और अपेक्षाओं के आपसी संघर्ष से ही हुआ है। अंग्रेजों द्वारा 1835 में मैकाले को 'राजनैतिक रूप से सही' (Politically correct) पुलिस बल के निर्माण की जिम्मेदारी दी गई थी जिसे उसने बखूबी पूरा किया था। ब्रिटेन की प्रचलित पुलिस व्यवस्था को 'जस का तस' न अपनाकर, मैकाले ने 'गुलामों पर शासन' करने वाली एक नई पुलिस का इजाद किया। कानून और विभागीय रेगुलेशन भी उसी हिसाब से बनाए और एक नई 'पुलिस संस्कृति' को जन्म दिया जिसे हम 'दरोगा संस्कृति' कह सकते हैं। भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था में 'दरोगा' या 'शहर कोतवाल' बहुत पहले से चले आ रहे थे उसने इन्हीं पदों को लिया और अंग्रेजों की 'सामराज्यीय आवश्यकता' के ढांचे में पिरो दिया। उसने दरोगा को सर्वशक्तिमान बनाया और उसे अंग्रेज एस.पी. की मर्जी पर पूरी तरह छोड़ दिया। उससे तफ्तीश कराई, बयान लिखवाए, परंतु उसके द्वारा किए इन कृतों को न्यायालय में पूर्णतः अमान्य कर दिया। इस प्रकार उसने अंग्रेजों के 'आंग्लो सैक्शन वैल्यू सिस्टम' का ध्यान रखते हुए जहां उन्हें न्याय के नजदीक रख वहीं दूसरी ओर 'प्रशासनिक आधार' पर उल्टे सीधे कार्य करने की भी पूरी छूट दी और इसके लिए उसे 'प्रशासनिक मैजिस्टेट' के अंतर्गत रखा।

इस प्रकार उसने एक ऐसी व्यवस्था दी जो हत्या, डकैती इत्यादि संगीन अपराधों में न्याय तो करती थी परंतु 'प्रशासनिक आधार' पर अन्य मामलों में भीषण अत्याचार करने में सक्षम थी। उसे 'पोलिटिकली करेक्ट' पुलिस के साथ-साथ 'इकोनामिकली करेक्ट' पुलिस भी देनी थी (जो उनका वास्तविक 'हिडेन एजेंडा' था)। अतः उसने पुलिस बल की संख्या बहुत कम रखी और थानों-चौकियों की संख्या भी अत्यंत सीमित रखी। कार्य संस्कृति की 'इकबाल' को कुछ इस प्रकार विकसित किया गया की, सिपाही तो दूर, एक लाल पगड़ी चौकीदार ही गांव के गांव नियंत्रित करने के लिए काफी था। उन्होंने स्थानीय दबंगों, जमीदारों आदि को अपनी व्यवस्था का परोक्ष रूप से एक अंग बनाया क्योंकि उनका मूल उद्देश्य था अपना शासन बनाए रखना और उसके विरुद्ध आवाज उठा सकने वालों को किसी न किसी प्रकार थोड़ा बहुत संतुष्ट रखना। अपनी व्यवस्था में उन्होंने दरोगों की 'अति और अत्याचारों' को नजरंदाज किया और इसे "दबंग और प्रभावी" कह कर समाज में स्वीकार्य बना दिया। इस प्रकार आज की 'दरोगा संस्कृति' को उन्होंने एक सोची समझी रणनीति के तहत विकसित किया। गुलाम भारतीय जन मानस ने समय के साथ धीरे-धीरे इसे कुछ इस प्रकार स्वीकार किया कि इसी व्यवहार को पुलिस का 'मानक' व्यवहार मान लिया और सराहना तक करने लगे। आज भी ब्रिटिश काल के दरोगाओं के किस्से कहानियां बड़े गर्व के साथ लोग

कहते हैं। अगर कोई बहुत 'शरीफ' पुलिस अधिकारी से उनकी मुलाकात हो जाए तो उसे तुरंत 'खारिज' कर देते हैं "कि पुलिस का कार्य इनके बस का है ही नहीं।" लोग पुलिस के हर स्तर के अधिकारी को अपनी 'दरोगा-स्केल' के पैमाने पर ही तौलते हैं और उसे फेल अथवा पास कर देते हैं। वरिष्ठ राज नेता हों अथवा बुद्धिजीवी सभी उसी पैमाने पर पुलिस अधिकारी का मूल्यांकन करते हैं इसी कारण बहुत से वरिष्ठ पुलिस अधिकारी उच्चतम पदों पर भी पहुंच कर 'दरोगा' जैसा ही व्यवहार करते हैं और उसी मानसिकता का प्रदर्शन करते हैं। अगर किसी पीड़ित को थाने से न्याय नहीं मिला तो किसी बड़े पुलिस अधिकारी से न्याय पा लेना बहुत कठिन हो जाता है। यह सब इसी वर्तमान दरोगा पुलिस संस्कृति की देन है।

1947 में देश आजाद हो गया। स्वाभाविक है राजनेताओं को सबसे अधिक शिकायत पुलिस से ही रही होगी क्योंकि सारा 'दमन' पुलिस ने ही किया होगा। हमने नया संविधान भी अपना लिया और जनता का शासन, जनता के लिए, स्थापित करने का प्रयास प्रारंभ हुआ। 1947 के बाद जो स्थिति बनी उसे भी हम 'कानून का राज्य' नहीं कह सकते। इसकी व्याख्या 'राज के कानून का राज्य जनता के लिए' की जा सकती है क्योंकि कानून तो राजा का ही बनाया-बना रहा। उसमें कोई व्यापक बदलाव तो किया नहीं गया।

पुलिस की 'कार्य संस्कृति' की नींव ही मैकाले ने एक बहुत दूरगामी सोची समझी रणनीति के तहत 'झूठ' पर आधारित कर दी। 'झूठी' एफ.आई.आर. और गवाह 'झूठे'। पुलिस चाहे जो कहे उसका सारा कथन कानूनन 'झूठ' है। अपराध नियंत्रण के लिए अपराधियों को सजा दिलाना पुलिस का काम। न्यायालय उन्हें छोड़ दे तो भी जिम्मेदारी पुलिस की। अपराध बढ़े तो भी जिम्मेदारी पुलिस की। फिर यहीं से पुलिस का 'दन्द-फन्द' प्रारंभ हुआ और पुलिस हो गई बिल्कुल 'अविश्वसनीय' और अंग्रेज चाहते भी यही थे। उन्हें भय था कि अगर पुलिस विश्वसनीय हो गई और लोग उसका दिल से सम्मान करने लगे तो कहीं विद्रोह न करा दें। उन्होंने पुलिस को अविश्वसनीय बनाने के साथ अत्याचारी भी बनाया ताकि उनका आतंक हो। दरोगा उन्होंने छांट-छांट कर उच्च मध्यवर्ग के परिवारों से बनाया ताकि उनकी "पावर" प्राप्ति की स्वाभाविक इच्छा पूरी हो सके और अंग्रेज अधिकारियों के पूर्ण नियंत्रण में भी रहें। उन्होंने इसी रणनीति के तहत दरोगों के चारित्रिक दोषों को भी नजरअंदाज किया ताकि वे उनकी कमजोरी का लाभ, आम जनता के दमन के लिए उठा सके। इस कार्य संस्कृति को विकसित करने में सैकड़ों साल लगे। ब्रिटिश शासन की रीढ़ की हड्डी—यही पुलिस बन गई और समाज में व्यवस्था को कायम करने में सफल हुई। इन दोनों गुणों—अर्थात 'अविश्वसनीयता' और 'अत्याचार' में जिन अधिकारियों ने जितनी महारत हासिल की वे ही अधिकारी पुलिस विभाग के 'आदर्श अधिकारी' बने। अच्छे खासे बुद्धिजीवी और वरिष्ठ राजनेता भी ऐसे पुलिस अधिकारियों का आज भी गुणगान करते सुने जा सकते हैं। ऐसे अधिकारी उस समय सफल भी रहे क्योंकि उनकी कोई विशेष जवाबदेही थी ही नहीं। केवल एस.पी. और डी.एम. को खुश रखना था और किसी की परवाह नहीं। कोतवाल—अपने को 'जालिम सिंह' अथवा 'लोहा सिंह' कहे जाने में गर्व का अनुभव करते थे।

कानून का पालन न करना, उसकी मनमाने ढंग से व्याख्या करना इसकी कार्य संस्कृति का अंग बन गया। कोतवालों को दम्भ के साथ यह कहते सुना जा सकता था कि—"किसी केस में जो मैं चाहूंगा वही होगा, चाहूंगा तो छूट जाएगा, न चाहूंगा तो सजा होगी, जो भी होगा मेरी मर्जी से होगा—क्योंकि कानून को सबूत चाहिए और सबूत बनाना न बनाना हमारा काम है।"

1947 के बाद भारतीय प्रजातंत्र का विकास हुआ। साथ ही साथ 'मीडिया' और 'सिविक सोसायटी' विकसित

हुई। मानवाधिकार के प्रति लोग जागरूक हुए। अतः दरोगा की मनमानी कैसे चल सकती थी? नहीं चली और कानून व्यवस्था में गिरावट आने लगी क्योंकि अपराधों का नियंत्रण 'कानून के दम' पर था ही नहीं--वह तो था 'दरोगा के दम' पर। दरोगा ने जैसे ही हथियार डाला सरकारें इसी आधार पर चुनाव हारने लगीं। फिर राजनेताओं ने पुनः दरोगा को 'दम' दिया और उसने 'इनकान्टर' प्रारंभ कर दिया। उ. प्र. के एक मुख्यमंत्री को भी कानून व्यवस्था ठीक रखने के लिए 'इनकान्टरों' का सहारा लेना पड़ा। यह इनकान्टर क्या है—बस इतना ही काफी है कि—"यह बिना मुकदमें के फांसी है" पुनः दरोगा को बलवान करना सरकारों की मजबूरी थी बिना इसके काम ही नहीं चलता। संक्षेप में--—मैकाले द्वारा विकसित पुलिस व्यवस्था एक स्वछंद दरोगा संस्कृति पर आधारित है जिसके लिए कानून गौंण है।

क्या हम इसी 'पुलिस संस्कृति' को स्वतंत्र भारत में भी बनाए रखना चाहते हैं? दुर्भाग्य है कि बहुत से लोग ऐसा ही चाहेंगे, क्योंकि आज समाज में बहुत से संगठित समूह विकसित हो चुके हैं जिनका वजूद ही इसी कार्य संस्कृति के कारण है। अगर पुलिस विश्वसनीय हो गई तो न्यायालयों से अपराधियों को सजा मिलने लगेगी, पुलिस को जनसहयोग मिलने लगेगा, जनता साहसी होने लगेगी और तथा कथित 'माननीयों' का कच्चा चिट्ठा सड़क पर खुलने लगेगा, तो इससे कौन खुश होगा? जिसे वास्तव में खुशी हो सकती है उसका नाम है 'जनता' परंतु वह तो बेचारी अबोध है।

किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कार्य संस्कृति का बहुत योगदान होता है। गीता में भगवान श्री कृष्ण दो तरह की कार्य संस्कृतियों का वर्णन करते हैं। दैवीय संपत और आसुरी संपत।[2] दैवीय कार्य संस्कृति में निर्भीकता, शुद्धता, आत्मनियंत्रण, त्याग, धैर्य प्रमुख होते हैं जबकि आसुरी कार्य संस्कृति में अहंकार, भ्रांति, स्वार्थ, घृणा, बैर और प्रतिशोध प्रमुख होते हैं। स्पष्ट है मैकाले ने आसुरी संपत पर आधारित पुलिस कार्य संस्कृति विकसित की और ऐसा उसने सोची समझी रणनीति के अंतर्गत किया। उन्हें इस देश, इसकी जनता और इनकी भावनाओं और संवेदनशीलताओं से कुछ लेना-देना था ही नहीं—अतः उन्हें दैवीय संपत पर आधारित संस्कृति विकसित करने की आवश्यकता ही नहीं समझी—यह कार्य था हमारे राजनेताओं का जिन्होंने देश का नया संविधान निर्मित किया था।

अंग्रेजों को भारतीय पुलिस पर कभी कोई विश्वास था ही नहीं। जो स्वाभाविक ही था अतः उन्होंने एक सोची समझी रणनीति के तहत पूरी पुलिस को ही 'अविश्वसनीय' बना दिया ताकि भारतीय भी उन पर विश्वास न करें। उनके आचरण में अहंकार, कार्य पद्धति में भ्रांति और स्वार्थ तथा व्यवहार में वैर और प्रतिशोध कूट-कूट कर डाल दिया जिसके कारण वे कभी सामान्य जनता का विश्वास नहीं जीत सके! और इसी आधार पर उन्होंने कानूनन बहुत से अधिकारों से भारतीय पुलिस को वंचित कर दिया जबकि ब्रिटिश पुलिस के पास उपरोक्त अधिकार थे। उन्होंने भारत में पुलिस को कानून का संयत्र (Instrument) न बनाकर शासन तंत्र का संयंत्र बनाया और वैसी ही कार्य संस्कृति को विकसित किया।

देश में स्वतंत्र और शक्तिशाली 'मीडिया' के विकास के कारण देश का आम नागरिक अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुआ है। हमारी 'सिविक—सोसाइटी' भी संगठित हुई है। जनता को अधिकार दिलाने के लिए बहुत से स्वयंसेवी संगठन भी आगे आए हैं। सरकार और न्याय पालिका ने भी 'सूचना के अधिकार' और जनहित याचिकाओं (P.I.L.) को उचित महत्व देकर इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाया है। भविष्य में पुलिस को एक नए भारत में कार्य करना होगा। विश्व का वैश्वीकरण हो रहा है। अपराध संगठित हो रहा है और अपराधियों की पकड़

राजनीति के रास्ते से, काफी गहरी होती जा रही है। अतः इन सभी बातों के परिप्रेक्ष्य में–पुलिस की एक बिल्कुल नई–'कार्य संस्कृति' अत्यंत अपेक्षित है और यह तभी संभव है जब पुलिस को 'संस्थागत सुरक्षा' प्रदान की जाए जैसे न्यायपालिका को प्राप्त है। पुलिस के अधिकारियों को कुछ इसी प्रकार की सुरक्षा प्राप्त हो जैसी न्यायधीशों को है तभी वे निर्भीक होकर 'कानून के राज्य' की स्थापना में अपना योगदान दे सकेंगे। न्यायपालिका की भूमिका, पुलिस की 'भूमिका' के बहुत बाद प्रारंभ होती है न्यायपालिका का निर्णय भी पुलिस के 'कार्य' पर ही निर्भर करता है अतः पुलिस को 'निस्सहाय' छोड़ कर न्यायपालिका का 'न्याय' सशक्त नहीं हो सकता। आज आवश्यकता है पुलिस को नापाक और सशक्त विभिन्न आपराधिक गठबंधनों से सुरक्षा प्रदान करने की, अन्यथा पुलिस वाले स्वयं इसमें शामिल हो रहे हैं और फल-फूल भी रहे हैं जबकि ईमानदार और अच्छे चरित्र वाले पुलिस कर्मी 'सिस्टम' से बाहर फेंके जा रहे हैं।

दूसरा प्रश्न यह उठता है कि क्या 'कार्य संस्कृति' बदली जा सकती है। यदि हां तो किस प्रकार इस संबंध में न्यूयार्क टाइम्स न्यूज सर्विस के 'डेविड ब्रूक्स के लेख, देशों की संस्कृति (The culture of nations)[3] का उल्लेख करना चाहूंगा जिसमें उन्होंने ब्रिटेन में हुए मुस्लिम आतंकवादियों द्वारा किए गए विस्फोट की व्याख्या करते हुए कार्य संस्कृति की महत्ता की विवेचना की है। उनका मानना है कि इसे बदला जा सकता है परंतु बाहरी प्रभाव बहुत विशेष परिस्थितियों में ही सफल होगा।

अगर वास्तव में इसे बदलना है तो यह केवल आंतरिक प्रभाव से ही बदला जा सकता है जब स्थानीय बुद्धिजीवी जो जिम्मेदार और विश्वसनीय है इस संबंध में अपनी जिम्मदारी समझें और स्थानीय मान्यताओं को आधुनिक आवश्यकताओं से तालमेल बैठाकर संगठन और समाज में एक नई सोच पैदा करें। आज आवश्यकता है पुलिस को सही दिशा देने और तदनुसार उपयुक्त कार्य संस्कृति विकसित करने की।

अर्ध शिक्षित, गरीब, भारतीय समाज के लिए पुलिस का अर्थ है 'सरकार'। जनता यहां पुलिस को अपनी अधिकतर समस्याओं के समाधान के योग्य मानती है अगर पुलिस वास्तव में सुधर जाए तो जनता की अधिकतर समस्याएं सुलझाई जा सकती हैं यह तभी संभव है जब आसुरी संपत से दैवीय संपत पर आधारित 'कार्य संस्कृति' विकसित की जाए। 50–60 सालों से पुलिस को इतने झटके झेलने पड़े हैं कि आज वह इस स्थिति में है कि इसकी एक नई कार्य संस्कृति विकसित की जा सके। देश और समाज को एक जन-स्वीकार्य, विश्वसनीय, आत्मनियंत्रित, मित्र पुलिस की आवश्यकता है।

दिल्ली के 'इन्स्टीट्यूट आफ सोशल साइन्सेज' द्वारा आयोजित डी.टी. लाखड़ावाला व्याख्यान माला में बोलने आए ब्रिटेन के प्रो. ऐन्थोनी गिडेन्स पूर्व निदेशक, लंदन स्कूल आफ इकोनामिक्स ने कहा कि आज आवश्यकता है सामाजिक प्रजातंत्र की (Social Democracy) जो तीसरे रास्ते के रूप में उभर रहा है क्योंकि दक्षिण पंथी समझते हैं कि सभी समस्याओं का समाधान बाजार की शक्तियों (Market forces) में है तो वामपंथी समझते हैं कि सभी समस्याओं का समाधान 'राज्य' (State) में है जबकि वास्तव में समस्या का समाधान दोनों के समन्वय में है। यह तभी संभव है जबकि दोनों में समय के साथ-साथ सुधार और सामन्जस्य स्थापित होता रहे। 1991 में देश ने बाजार संबंधी सुधारों का परिणाम देख लिया है अब बारी है प्रशासनिक सुधारों की, जिसमें पुलिस सबसे आगे है इसका सीधा संबंध एक सामान्य व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता (Quality of life) से है। 'राज्य' में उसकी 'आस्था' से है। इसी के साथ प्रारंभ होना चाहिए संपूर्ण आपराधिक न्याय व्यवस्था का सुधार क्योंकि आज 'न्याय' प्रक्रियाओं की भूल-भूलैया में कुछ इस तरह उलझ गया है कि न्याय की जगह 'नौटंकी' हो गया है जहां हर पात्र बस अपना

केवल मात्र 'रोल' कर रहा है। ❐

भारत की कारागार व पुलिस व्यवस्था

डा. के. पी. सिंह

विभागाध्यक्ष, समाज शास्त्र विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान

श्रीमती टीना अरोड़ा

शोध छात्रा, समाज शास्त्र विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान

प्रस्तावना

जिस प्रकार दोष सिद्ध अपराधियों के दण्ड को प्रवर्तित करने के लिए कारागार व्यवस्था है उसी प्रकार अपराधियों की गिरफ्तारी, विरोध तथा न्यायालयीन परीक्षण में सहायता, अनुसंधान आदि कार्यों के लिए पुलिस बल की व्यवस्था प्रायः विश्व के सभी देशों में है।

पुलिस, न्यायालय तथा कारागार ये आपराधिक न्याय प्रशासन के तीन प्रमुख अभिकरण है, इनके अतिरिक्त वर्तमान में परिवीक्षा, कारावास तथा कारावासियों के लिए खुले शिविरों आदि को भी दाण्डिक न्याय प्रशासन का अभिन्न अंग माना जाने लगा है। इन विभिन्न दाण्डिक संस्थाओं के माध्यम से अपराधियों में सुधार करके समाज में उन्हें पुनर्वासित करने का प्रयत्न किया जाता है। पुलिस का मुख्य कार्य अपराधों की तफ्तीश करना (अनुसंधान) तथा अपराधियों को गिरफ्तार कर हिरासत में लेना है ताकि उन्हें परीक्षण के लिए न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जा सके। इसके अतिरिक्त समाज में शांति व्यवस्था बनाए रखने का सामान्य दायित्व भी पुलिस बल पर ही होता है। अपराधों के निवारण तथा समाज से अपराधियों की संख्या कम करने में भी कारागार महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, क्योंकि इनके द्वारा अपराधियों को समाज से दूर व अलग रखना संभव होता है। आज विश्व के प्रायः सभी प्रगतिशील देश अपनी कारागार व्यवस्था में उपचारात्मक पद्धति को अधिकाधिक महत्व दे रहे हैं ताकि कारावासियों का व्यक्तित्व नष्ट न होने पाए। पुलिस व कारागार प्रबंधन को समझने के लिए पुलिस व कारागार की परिभाषा को देखना होगा।

पुलिस

पुलिस की परिभाषा देते हुए सदरलैंड ने लिखा है कि "पुलिस शब्द प्राथमिक रूप से राज्य के उन प्रतिनिधियों की ओर संकेत देता है जिनका कार्य, विधि व्यवस्था बनाए रखना है तथा विशेष रूप से अधिनियमित दण्डविधि को प्रवर्तित करना है।" इस परिभाषा में 'पुलिस' की तीन विशेषताओं की ओर संकेत किया गया है, जो निम्नानुसार है—

1. पुलिस राज्य के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करती है।
2. पुलिस का कार्य समाज में कानून व्यवस्था को बनाए रखना।
3. कानून व्यवस्था बनाए रखने हेतु पुलिस दण्डविधि तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को लागू करती है।

स्पष्ट है पुलिस आपराधिक न्याय प्रशासन का प्रथम महत्वपूर्ण अभिकरण है। इसी कारण पुलिस बल को 'सुरक्षा की प्रथम पंक्ति (First line of Defence) निरूपित किया गया है।[2]

कारागार

सन 1894 के कारागार अधिनियम के अनुसार कारागार राज्य सरकार द्वारा निर्धारित वह स्थान है जहां

बंदियों को स्थायी/अस्थायी रूप में रखा जाता है। फेयर चाइल्ड ने कारागार की परिभाषा देते हुए कहा है कि "यह एक ऐसी दाण्डिक संस्था है जिसका संचालन राज्य या संघीय सरकार करती है और जिसका उपयोग ऐसे प्रौढ़ अपराधियों के लिए होता है, जिसकी सजा एक वर्ष से अधिक हो।

इस प्रकार पुलिस व्यवस्था व कारागार व्यवस्था एक दूसरे की पूरक है।

भारत में वर्तमान पुलिस

डी.एच. बेले के अनुसार पुलिस अधिनियम, 1860 के अंतर्गत कार्य कर रही वर्तमान पुलिस व्यवस्था की तीन प्रमुख विशेषताएं है–

1. भारतीय पुलिस सुसंगठित एवं सुनियोजित है तथा वह राज्यों के निर्देशानुसार कार्य करती है।
2. वह सेना बल की भांति विभिन्न केडरों में वर्गीकृत है।
3. प्रत्येक राज्य की पुलिस को दो शाखाओं में विभाजित किया गया है, जिसे सशस्त्र पुलिस (Armed Police) तथा निःशस्त्र पुलिस (Unarmed Police) कहा जाता है।

भारत के संविधान में पुलिस को राज्य सूची 5 के अंतर्गत रखा गया है। अतः राज्य में शांति व्यवस्था कायम रखना तथा अपराधों की रोकथाम करने का दायित्व पूर्णतः राज्य पर होता है और राज्य यह कार्य पुलिस के माध्यम से करता है।

भारत में महिला पुलिस

भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय पुलिस सेवा में सन 1947 से महिला पुलिस को एक स्वतंत्र शाखा के रूप में विकसित किया गया जिन्हें मुख्यतः बाल अपराधियों तथा महिला अपराधियों का दायित्व सौंपा गया। भारतीय महिला पुलिस का मुख्य कार्य बच्चों तथा महिलाओं से संबंधित अपराधों की छानबीन करना तथा महिला अपराधियों की अनुरक्षा करना, तलाशी लेना तथा उन्हें आवश्यकतानुसार अभिरक्षा में लेना है। इसी कड़ी में महिला पुलिस थानों की स्थापना भी की गई है। हम भारतवासियों के लिए यह गौरव की बात है कि विश्व का प्रथम महिला पुलिस थाना केरल के कालीकट में 27 अक्टूबर, 1973 को स्थापित किया गया। इसके बाद सन 1987 में मध्यप्रदेश में व 1990 में राजस्थान व जम्मू कश्मीर में महिला थाने की स्थापना की गई।

भारत में कारागार व्यवस्था में सुधार

भारत के संविधान के अंतर्गत कारागार को पुलिस तथा शांति व्यवस्था के साथ राज्य सूची की 7 वीं अनुसूची में रखा गया है। भारतीय कारागार व्यवस्था में वास्तविक सुधार का प्रारंभ सन 1836 से माना जाता है जब एक कारागार जांच समिति का गठन किया गया जिसने कारावासियों से सड़कों के निर्माण कार्य में मजदूर के रूप में कार्य लिया जाना बंद किए जाने की अनुशंसा की इसके बाद सन 1838 में मेकाले के सुझाव पर एक कारागार सुधार समिति गठित की गई जिसने निम्नलिखित सुझाव दिए–

1. एक केंद्रीय बंदीगृह की स्थापना की जाए जिसमें एक हजार कैदियों को रखने की व्यवस्था हो तथा केवल ऐसे कैदी ही रखे जाए जिसकी सजा एक वर्ष से अधिक अवधि की हो।
2. प्रांतों के विभिन्न कारागारों पर उचित नियंत्रण रखने हेतु प्रत्येक प्रांत में एक कारागार निरीक्षक की नियुक्ति की जाए।
3. महिला अपराधियों को पृथक रखने की व्यवस्था की जाए।

1862 में द्वितीय कारागार जांच समिति गठित हुई जिसने कारागारों में गंदगी तथा अस्वास्थ्यकारी दशा पर गंभीर चिंता व्यक्त करते हुए इनमें तत्काल सुधार के लिए

सुझाव दिया कि केंद्रीय कारागार में 15 प्रतिशत कैदियों के लिए एकांत कारावास की व्यवस्था हो तथा केंद्रीय और प्रांतीय कारागारों में चिकित्सक नियुक्त किए जाए। सन 1866 में चिकित्सक नियुक्त किए गए। इसके बाद कारागार व्यवस्था में सुधार हेतु तृतीय चतुर्थ एवं पंचम कारागार समितियों ने समय-समय पर सुझाव दिए जिन्हें विभिन्न चरणों में लागू किया गया।

सन 1894 में भारत के लिए कारागार अधिनियम पारित हुआ जो भारतीय कारागारों की एकरूपता की दिशा में महत्वपूर्ण उपलब्धी थी। इस अधिनियम की उल्लेखनीय बात यह थी कि इसमें कारावासों के वर्गीकरण हेतु आवश्यक कदम उठाए गए तथा कोड़े लगाने जैसे अमानवीय दण्ड को समाप्त करके दण्ड के स्वरूप में परिवर्तन किया गया। सन 1897 में ब्रोस्टल तथा सुधार विद्यालय अधिनियम, 1898 पारित किया गया जिसके अंतर्गत बाल तथा किशोर अपराधियों के लिए अनेक ब्रोस्टलों की स्थापना की गई। सन 1919-20 में एलेक्जेन्डर कार्डयू की अध्यक्षता में जेल सुधार, समिति गठित की गई। इस समिति का विचार था कि कारागारों में 'कठोरता की बजाय' सुधार का वातावरण तैयार किया जाना चाहिए। कार्डयू समिति ने स्वीकारा कि अपराधियों के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाकर ही उन्हें सुधारा जा सकता है।

इस समिति की सिफारिशों के साथ ही भारत में 1919 में भारत शासन अधिनियम लागू हुआ जिसके अंतर्गत कारागार को प्रांतीय विषय बना दिया गया। फलतः कारागारों के सुधार की गति पुनः एक बार मंद पड़ गई।

सन 1946 में पुनः जेल सुधार समिति बनाई गई जिसने सुझाव दिया कि कुछ आदर्श जेल स्थापित किए जाए तथा अपराधियों का नए सिरे से वर्गीकरण करके उन्हें 1.बाल अपराधी, 2. वयस्क अपराधी, 3. महिला अपराधी, 4. अभ्यस्त अपराधी, 5. आकस्मिक अपराधी, 6. मनोरोगी अपराधी आदि श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाए। इस समिति ने बाल अपराधियों के प्रति अधिक उदारता व सतर्कता बरतने पर भी जोर दिया। देश आजाद होने के बाद 1949 में पकवासा समिति बनी जिसने कारागार सुधार की दिशा में कई कार्य किए। जिसमें 'गुड टाइम अलाउन्स' की व्यवस्था तथा मनोचिकित्सक पद्धति से कैदियों के उपचार की व्यवस्था की बात कही फलस्वरूप सुधारगृह, आदर्श जेल आदि की स्थापना की गई तथा 1950 के बाद कारावासियों के मनोचिकित्सक तथा मनोवैज्ञानिक पद्धति से उपचार की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। तत्पश्चात 1951-52 में भारत में जेल प्रशासन के संबंध में प्रतिवेदन तैयार किया गया जिसमें डा. रेकलैस एवं डा. गाल्वे ने कई सुझाव दिए।

इस प्रकार समय-समय पर बंदी गृहों के इंस्पेक्टर जनरल के सम्मेलन होते रहे हैं और बंदीगृह सुधार की दिशा में कार्य चलता रहा है। आज भारतीय बंदीगृहों की दशा में बहुत सुधार आ चुका है और जेल सुधार तथा अपराधी सुधार की दिशा में भारत की जेलों में नए-नए प्रयोग होते रहे हैं जो विश्वभर के अग्रणी राष्ट्रों के लिए उत्सुकता का विषय है।

राष्ट्रीय कारागार आयोग

जेलों के सुधार हेतु 1980 में न्यायमूर्ति ए.एन. मुल्ला की अध्यक्षता में अखिल भारतीय जेल सुधार समिति गठित की गई जिसने 31 मार्च 1983 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की तथा दिल्ली के तिहाड़ जेल तथा आगरा संप्रेक्ष गृह में बाल अपराधियों के साथ हो रहे दुर्व्यवहार के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए इन्हें घोर-अपराधियों से पूर्णतः पृथक रखे जाने का सुझाव दिया परिणामस्वरूप सन 1986 में किशोर न्यायालय अधिनियम पारित हुआ जिसमें 2002 में संशोधन किए गए। इस समिति ने निम्न सुझाव दिए-

1. कारावास स्वच्छ व हवादार हो, भोजन, कपड़ों पर विशेष ध्यान दिया जाए।
2. कैदियों की उत्तरवीक्षा (Aftercare) पुनर्वास, पैरोल एवं परिवीक्षा को कारागार व्यवस्था काअभिन्न अंग माना जाए।
3. प्रचार माध्यमों से संबंधित व्यक्तियों व लोकसेवी संस्थाओं को कारागार के निरीक्षण की सुविधा प्रदान की जाए।
4. विचारणाधीन कैदियों व दोष सिद्ध कैदियों को पृथक रखा जाए।
5. सरकार द्वारा पर्याप्त वित्तीय अनुदान

फरवरी 1988 में महिला कारावासियों की स्थिति में सुधार हेतु भी न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ समिति गठित की गई। इसने अधिक महिला पुलिसकर्मियों की नियुक्ति की अनुशंसा की तथा विशेष बाल अपराध प्रकोष्ठ स्थापित किए जाने की सिफारिश की है।

इस प्रकार स्वतंत्रता पश्चात गत पचास वर्षों में भारतीय कारागार व्यवस्था में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। वर्तमान समय में कारागार व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य अपराधियों से समाज का संरक्षण करना तथा अपराधियों को अपराध कर्म से दूर रखने का हर संभव प्रयास करते हुए उन में सुधार करना है और कारावासी की हर संभव सहायता करके उसे समाज में पुनर्वासित करना है, ताकि वह एक सामान्य जीवन व्यतीत कर सके। इसी तथ्य के मद्देनजर उच्चतम न्यायालय ने कैदियों के मानवाधिकार को ध्यान में रखते हुए कारागार प्रबंधन में सुधार व कैदियों के हितों (पक्ष) में कई महत्वपूर्ण निर्णय दिए हैं।

कैदियों के मानवाधिकार व कारागार प्रबंधन पर उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए महत्वपूर्ण फैसले—

1. सुनील बतरा बनाम देहली प्रशासन[4] के बाद में बहुमत का निर्णय देते हुए न्यायमूर्ति देसाई ने कहा था कि एकांत कारावास का कैदियों पर परिभ्रष्ट या अपमानित करने वाला तथा अमानवीय प्रभाव पड़ता है। कैदी का लगातार एकांतवास इतना प्राकृतिक हो सकता है कि इससे पागलपन हो सकता है। कैदी का विशेष एकांतवास से एक विनाशकारी असाधारण पर्यावरण बनता है। दीर्घकाल के कारावास एकांतवास कैदियों के भौतिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए विनाशकारी है। इस वाद में न्यायमूर्ति देसाई ने धारित किया कि कैदी अधिनियम, 1894 की धारा 30 (2) जेल अधिकारियों को मृत्यु दण्ड पाने वाले कैदियों को एकांत कोठरी में निरुद्ध करने को अधिकृत करती है न कि जेल अनुशासन का उल्लंघन करने पर, अतः यह सर्वप्रथम अनुच्छेद 20 का तथा अनुच्छेद 14 एवं 19 का भी उल्लंघन होगा। इस वाद को कैदियों के अधिकारों के मामले में मील का पत्थर माना जाता है।

2. सुनील बतरा बनाम देहली प्रशासन एवं चार्ल्स गुरुमुख शोभराज बनाम देहली प्रशासन[5] के वाद में न्याय मूर्ति देसाई ने निर्णय देते हुए कहा था कि विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के सिवाय अनुच्छेद 21 व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करने की मनाही करता है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता को इस सीमा तक प्रतिबंधित करना कि वह नकार या खण्डन हो जाए वंचित करना समझा जाएगा। कैदी को हथकड़ी पहनाने से उसकी सीमित स्वतंत्रता भी समाप्त हो जाती है। अतः केवल विधि द्वारा ही इसे उचित ठहराया जा सकता है।

3. प्रेम शंकर शुक्ला बनाम देहली प्रशासन[6] के वाद में निर्णय देते हुए न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने कहा कि प्रथम दृष्टया Prima facie हथकड़ी लगाना अयुक्तियुक्त, कड़ा तथा मनमाना कार्य है। इससे अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होता है। हथकड़ी लगाना केवल मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के अनुसार ही न्यायोचित हो सकता है।

4. शीला बार्से बनाम महाराष्ट्र राज्य[7] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्णित किया कि हिरासत में होने वाली हिंसा से संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होता है। इस वाद में न्यायमूर्ति भगवती ने महाराष्ट्र के कारागार महानिरीक्षक को निदेश दिया कि परीक्षण अधीन कैदियों को विधिक सहायता समिति के विषय में सूचित करके ऐसे कैदियों को विधिक सहायता दे। इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र राज्य से सलाह करके उच्चतम न्यायालय ने महिला कैदियों के संरक्षण के संबंध में विस्तार से निदेश जारी किए।

5. अटार्नी जनरल ऑफ इंडिया बनाम लक्ष्मी देवी[8] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने धारित किया कि लोक फांसी या जनता के समक्ष किसी कैदी को फांसी दिया जाना बर्बरतापूर्ण कृत्य है तथा इससे संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होता है। इस वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा लोक फांसी दिए जाने के निर्णय को असंवैधानिक घोषित किया।

निष्कर्ष

अपराध का नियंत्रण व दण्ड को प्रवर्तित करने हेतु कारागार व पुलिस व्यवस्था है। इसका तीसरा प्रमुख पक्ष न्यायालय है। पुलिस व कारागार व्यवस्था समान्तर रूप से विकसित होती रही है तथा इसमें भारत सरकार ने भी समय-समय विभिन्न अधिनियम समिति का निर्माण कर इस व्यवस्था में सुधार लाने का प्रयास किया है। इसके इतिहास पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट है कि कारागार व्यवस्था में निरंतर सुधार दृष्टिगत होते रहे हैं तथा कैदियों के साथ मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाए जाने पर बल दिया जाता रहा है। तत्पश्चात मानवाधिकार का Concept आने से भी कैदियों की स्थिति में निरंतर सुधार हो रहा है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह कहा जा सकता है कि भारत की पुलिस व्यवस्था व कारागार व्यवस्था समय के साथ पर्याप्त रूप से विकसित हुई है तथा लोक कल्याण व मानवीय पक्ष को विशेष महत्व दिया गया है। वर्तमान में भारत में न्याय प्रशासन के तीन प्रमुख अभिकरण पुलिस, न्यायालय व कारागार व्यवस्था परस्पर संबंधित है तथा वर्तमान में अत्यधिक आधुनिक व व्यवस्थित है तथा सुधार के निरंतर प्रयास हो रहे हैं जिनमें उच्चतम न्यायालय के निर्णयों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

संदर्भ

1. सदरलैंड एण्ड केसी : प्रिंसिपल्स ऑफ क्रिमिनोलाजी (1968) पृ. 330
2. बार्नस एण्ड टीटर्स : न्यू हॉरीझन्स इन क्रिमिनोलाजी (1966) पृ. 221
3. फेयर चाइल्ड एच.पी. : डिक्शनरी ऑफ सोशियोलाजी पृ. 232
4. (1978)4 एस.सी.सी. 494, 569 (पूर्ण पीठ)
5. (1978)4 एस.सी.सी. 494, 577, 579 (पूर्ण पीठ)
6. (1980)3 एस.सी.सी. 526
7. (1983)2 एस.सी.सी. 96, 99-100
8. ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 467, 468

❐

आतंकवाद - एक ज्वलंत समस्या

राकेश शर्मा निशिथ

1/5569, रामाश्रम, बलबीर नगर एक्स.,
शाहदरा दिल्ली-110032

आज आतंकवाद की जड़ें पूरे विश्व में फैल चुकी हैं। विश्व में शायद ही कोई ऐसा देश हो, जिस पर आतंकवाद की काली छाया न पड़ी हो तथा जो पूरी तरह शांत एवं सुरक्षित हो। आतंकवाद एक ऐसी ज्वलंत समस्या है, जिससे आज दुनिया का लगभग हर व्यक्ति भली-भांति परिचित है। यह एक ऐसी विचारधारा है, जो व्यक्तिगत अथवा राजनैतिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शक्ति तथा अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग में विश्वास रखती है। इसका प्रयोग प्रायः विरोधी वर्ग, दल, समुदाय या संप्रदाय को भयभीत करने और उस पर विजय प्राप्त करने की दृष्टि से किया जाता है, जबकि वे यह नहीं जानते कि आतंकवाद से यदि कोई राहत मिलती होती तो फिलस्तीन कभी का आजाद हो चुका होता। आजादी के लिए दूसरों के प्राणों की हानि नहीं, अपितु अहिंसावादी संघर्ष की आवश्यकता है, जैसा कि गांधीजी ने अंग्रेजों के विरुद्ध किया था।

आतंकवाद की उत्पत्ति

आतंकवाद एक वाद या व्यवस्था के रूप में भले ही बहुत बाद में स्थापित हुआ, पर इसके बीज हजारों वर्ष पहले ही पड़ चुके थे। जहां एक ओर रामराज्य जैसी व्यवस्थाएं थीं, वहीं क्रूर और दयाहीन राक्षसी प्रवृत्ति के निरंकुश शासनाध्यक्षों से हमारा प्राचीन इतिहास और साहित्य भरा पड़ा है। रोम में द्वितीय शताब्दी ईसापूर्व में आतंक और हिंसा के कई उदाहरण हैं, जहां गुलामों ने विद्रोह किया था। 5वीं और 6वीं सदी में ऐसे उदाहरण हैं, जब निरंकुश शासनों के खिलाफ आवाज उठी। मानवीय हिंसा कब धीरे-धीरे अपना स्वरूप बदलकर आतंकवाद के रूप में स्थापित हो गई यह कहना मुश्किल है। लेकिन इसके कुछ स्पष्ट प्रमाण 16वीं और 17वीं शताब्दी में दिखने लगे थे।

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान यूरोप और अमेरिका में कई जगह राजनयिकों और असैनिक कर्मचारियों पर प्राणघात हमले किए गए। इससे युद्ध तो नहीं जीता जा सकता था, पर आतंक की लहर अवश्य फैलाई जा सकती थी। द्वितीय विश्व युद्ध तक पहुंचते-पहुंचते आतंकवाद से अछूते देश भी इसकी गिरफ्त में आ गए। आतंकवादियों और अपराध जगत में जो सांठ-गांठ हुई, उससे अपराधियों और तस्करों को अपने हथियार बेचने के लिए एक बाजार मिल गया। आतंकवादी संगठन युवकों को दिशाहीनता और बेरोजगारी की समस्या का लाभ उठाकर युवाशक्ति का हिंसात्मक गतिविधियों के लिए इस्तेमाल करते हैं। जिन लोगों, नेताओं और विचारकों ने आतंकवाद को एक हथियार के तौर पर माना और उसकी वकालत की, उसमें फ्रांसीसी क्रांति के सूत्रधार, रूसी क्रांति के नेता, जर्मन समाजशास्त्री विलहेम वेटिंग, हिटलर, यासिर अराफात और कर्नल गद्दाफी आदि का नाम अग्रणी है।

आतंकवाद का स्वरूप/परिभाषा

आतंकवाद की आधारशिला हिंसा है। जहां एक ओर हिंसा व्यक्तिगत कारणों या कुछ गिने-चुने कारणों अथवा व्यक्तियों के स्वार्थ तक ही सीमित होती है, वहीं आतंकवाद का स्वर उससे और ऊपर है। यह व्यक्तिगत दायरों और हिंसा के दायरों से बाहर निकलकर ज्यादा व्यापक और संगठित हो जाता है। आतंकवाद एक ऐसा स्वरूप है, जो पूरी मानव सभ्यता के लिए भस्मासुर जैसा विकराल रूप धारण कर सकता है।

युद्ध में आमतौर पर दुश्मन सेना का संहार, नेताओं को बंदी बनाना और उनसे आत्मसमर्पण कराना होता है। लेकिन आतंकवादी संगठनों से कैसे लड़ेंगे क्योंकि उन पर कोई कानून लागू नहीं होता, उनका कोई राष्ट्रपति नहीं है, जिसे पकड़ा जा सके, कोई अर्थव्यवस्था नहीं है, जिसके खिलाफ प्रतिबंध लगाया जा सके और कोई इलाका नहीं है जिस पर कब्जा करके विजय की घोषणा कर सकें। अतः आतंकवाद से लड़ाई के लिए समग्र दृष्टि की जरूरत है।

आतंकवाद का आर्थिक पहलू

जेहाद की पुकार, सदियों से चली जा रही धार्मिक कटुताएं और क्षेत्रीय विवाद आतंकवाद के मूल कारण हैं। परंतु इनसे पनपे आतंकवाद को इतना मारक, सार्वभौम (ग्लोबल)और ताकतवर उसकी आर्थिक कामयाबी ने बनाया है। आतंकवाद का एक पहलू इसके व्यापार का है और यह कोई मामूली पहलू नहीं है। हर मानवीय गतिविधियों की तरह आतंकवाद का एक आर्थिक आयाम है। वैश्विक आतंकवाद का अर्थतंत्र डेढ़ खरब डालर आंका गया है। यह राशि पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था के पांच प्रतिशत के बराबर और भारत की अर्थव्यवस्था से कई गुना है। इसमें शामिल हैं—दान के नाम पर एकत्र किया जा रहा पैसा, कुछ देशों से चोरी-छुपे मिलने वाली आर्थिक और बुनियादी मदद, अपहरण, तस्करी और नशे के धंधें से जुटाई जा रही दौलत या फिर आतंकवादी संगठनों के जरिए चलाई जा रही कंपनियों की कमाई। इन सबको मिलाकर आतंकवाद ने एक विशाल आर्थिक साम्राज्य की हैसियत हासिल कर ली है।

आतंकवादियों की गतिविधियों के तरीके

आतंकवाद का एक खास उद्देश्य होता है, जो बड़ी सावधानी से चुना जाता है। आतंकवाद की रीढ़ की हड्डी है हिंसा। एक जमाना था, जब आतंकवादी हमले का मतलब कुछ लोगों की जान ले लेना, कोई बम फोड़ देना या बहुत कुछ हुआ तो कुछ लोगों का अपहरण कर लेना था आज का आतंकवादी हमला चंद हत्याओं और हवाई जहाजों के अपहरण से भी आगे निकलकर हवाई जहाजों के आत्मघाती हमलों तक पहुंच गया है, जिसकी किसी ने कल्पना भी नहीं की थी। हरेक आतंकवादी चाहता है कि एक घटना के बाद दूसरी घटना ज्यादा प्रभावपूर्ण और दिल दहलाने वाली हो। अपने लक्ष्य के लिए बुनियादी तौर पर आतंकवादी निम्न तरीके अपनाता है—बम विस्फोट, कत्लेआम, अपहरण, हथियारबंद हमला या घात लगाकर हमला, विमान अपहरण, अवरोध और बंधक बनाना, आगजनी, उपर्युक्त सभी तरीकों की धमकी। इसके अतिरिक्त आधुनिक तकनीकों को अपनाने से भी आतंकवादी परहेज नहीं करते हैं। ये तकनीक हैं– परमाणु उपकरणों का इस्तेमाल, जैविक और रासायनिक हथियारों का प्रयोग, आत्मघाती हमला, हवाई हमला या आत्मघाती हवाई हमला।

अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद

आतंकवाद का अर्थ है सरकार या राजनीतिक प्रणाली को झुकाने के लिए हिंसा का इस्तेमाल करना। यह एक तरह से शहरी गुरिल्ला युद्ध है। हाल के बरसों में यह तरीका दुनिया भर में प्रसिद्ध हुआ है, बल्कि कहना चाहिए कि व्यवस्था से लड़ने का सबसे पसंदीदा औजार बन गया है। आतंकवादी तीन बातों का निर्णय खुद करते हैं लक्ष्य, समय और हथियार। इसके साथ ही वे जान लेने और जान देने के लिए भी तैयार रहते हैं। आतंकवाद की प्रकृति में यह निहित है कि वह एक जगह कार्रवाई करता है पर उसके तार दूर-दूर तक फैले होते हैं। जैसे असम का आतंकवादी संगठन उल्फा कई काम अपने बांग्लादेश कार्यालय से करता है। पूर्वोत्तर में सक्रिय कई आतंकवादी संगठन अपनी कार्रवाई तो राज्य में करते हैं पर उनके नेता बर्मा, बैंकाक या लंदन में रहते

हैं।

आतंकवाद की सबसे बड़ी शक्ति उसके वास्तविक उद्देश्यों का रहस्यात्मक होने में होती है। आतंकवाद भारत की ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व की एक ज्वलंत समस्या है। इसमें हजारों निरीह और भोले-भाले लोग मौत के घाट उतार दिए जाते हैं। अमरीका ओसामा बिन लादेन से, रूस चेचेन्या आतंकवादियों से, श्रीलंका लिट्टे से, आयरलैण्ड आयरिश रिपब्लिक आर्मी से, जापान रेड आर्मी से, इजराइल फिलिस्तीन मुक्ति संगठन से, इटली रेड ब्रिज से, इराक कुर्द से और भारत में कई देशी-विदेशी आतंकवादी संगठन से संबंधित हिंसात्मक कार्रवाईयों से त्रस्त हैं।

आतंकवादी अब अनपढ़ सर्वहारा नहीं, खास पढ़े लिखे और अत्याधुनिक तकनीक से संपन्न लोग हैं। वे घातक हथियार खरीद सकते हैं और उन्हें चलाने की कला में दक्ष हो सकते हैं। यहां तक कि अब तो वे परमाणु हथियार तक अपनी पहुंच बढ़ाते नजर आ रहे हैं। अब तो वे संचार क्रांति की मदद से कम कीमत और कम समय में हिंसक घटनाओं को अंजाम दे रहे हैं तथा अपना नेटवर्क फैला रहे हैं। कई आतंकवादी संगठन तो इंटरनेट के माध्यम से वारदात को अंजाम देने लगे हैं।

सर्वमान्य परिभाषा नहीं

आतंकवाद को एक परिभाषा के दायरे में लाना एक बहती नदी को कुएं में समाने जैसा है। Terror शब्द फ्रांस और लैटिन के Terrere से बना है, जिसका अर्थ है डराना To frighten! संयुक्त राष्ट्र अभी तक आतंकवाद की कोई सर्वमान्य परिभाषा तय नहीं कर पाया है। आतंकवाद के वास्तविक स्वरूप को जानने के लिए उसको पारिभाषित करने के लिए अनेक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा प्रयास किए गए हैं। "कन्वेंशन ऑन प्रिवेन्शन एण्ड पनिशमेंट, 1973" द्वारा आतंकवाद की परिभाषा इस प्रकार दी गई है, **आतंकवाद का अभिप्राय उन आपराधिक कृत्यों से है जो किसी राज्य के विरुद्ध उन्मुख हों और जिसका उद्देश्य कुछ खास लोगों या जन-मानस के मन में भय या आतंक पैदा करना है।** आतंक का अर्थ है संत्राय, भय अथवा भीति, एक ऐसी मानसिक अवस्था, जो पीड़ा की आशंका अथवा प्रतिकूल एवं आशंकाजनक घटनाओं से उद्भूत होती है। संकट के समय जो भय उत्पन्न होता है, वह आतंक कहलाता है। आतंक को हिंसा की पराकाष्ठा कहा जा सकता है।

भारत में आतंकवाद

भारत की विभिन्नताएं और यहां के कई इलाके आतंकवादियों के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा करते हैं। इतना विशाल देश और सौ करोड़ से ज्यादा लोगों के बीच कोई गद्दार आकर छुप जाए और अपने इरादों को अमली जामा पहनाने लगे यह पता लगाना मुश्किल हो जाता है। आजादी के बाद भारत में आतंकवादी गतिविधियों का प्रारंभ 5वें दशक में नगालैण्ड में, 6वें दशक में मिजोरम में, 7वें दशक में मणिपुर और 8वें दशक में असम और त्रिपुरा में उल्फा आतंकवादियों की गतिविधियों में देखा जा सकता है। इसके बाद पंजाब और कश्मीर में आतंकवाद अपने विकराल रूप में देखा गया था।

वर्ष 1989 के बाद से भारत में कश्मीर पर, पंजाब पर, पूर्वोत्तर पर आतंकवादी हमलों की जैसी झड़ी लग गई। यहां तक कि भारत की संसद और दिल्ली के लालकिले पर हमला कर आतंकवाद ने भारत के राजनीतिक वजूद को खुली चुनौती तक दे डाली है। अब तो आतंकवादियों की हिम्मत और बढ़ गई है और उन्होंने हमारे अर्थतंत्र को हिलाने के इरादे से हैदराबाद, बेंगलूर, अहमदाबाद, मुम्बई जैसे मजबूत आर्थिक केंद्रों पर भी सफल और असफल हमले करने शुरू कर दिए हैं।

भारत की राजधानी दिल्ली में 1997 से अब तक बम धमाकों की 26 बड़ी वारदातें हों चुकी हैं। इनमें 92

लोगों की मौत के अलावा 600 से ज्यादा व्यक्ति घायल हुए हैं। दिसंबर 2001 को संसद पर हुए आतंकवादी हमलों में 11 लोग मारे गए थे। इस घटना ने दुनियाभर में लोगों का ध्यान दिल्ली में बढ़ती दहशत की ओर खींचा। देश के कई बड़े शहर आतंकवादियों के निशाने बनते जा रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों में (जम्मू-कश्मीर, असम और पूर्वोत्तर के राज्यों के अतिरिक्त) हुए प्रमुख बम धमाके, जिन्होंने देश को दहला कर रख दिया है, इस प्रकार है–

- 12 मार्च, 1993–मुंबई में 13 धमाकों में 257 लोग मारे गए और 700 से अधिक घायल हुए।
- 14 फरवरी, 1998–कोयंबटूर एक सभा में धमाके में 58 लोग मारे गए।
- 15 अगस्त, 2003— मुंबई के गेटवे ऑफ इंडिया व झवेरी बाजार में आतंकवादियों द्वारा 58 लोग मरे और 100 घायल हुए।
- 7 मार्च, 2006—बनारस में हुए धमाके में 20 व्यक्ति मारे गए।
- 22 मार्च, 2006— दिल्ली में दो बम फटे, जिसमें एक व्यक्ति मरा और 70 से अधिक लोग जख्मी हुए।
- मई, 2006— मालेगांव (महाराष्ट्र) में मस्जिद के बाहर धमाके में 38 लोग मरे और 100 से अधिक घायल हुए।
- 11 जुलाई, 2006—मुंबई की लोकल ट्रेनों में एक के बाद एक विस्फोट हुए, जिसमें 187 व्यक्ति मारे गए और 500 से अधिक घायल हुए।
- 19 फरवरी, 2007– पानीपत में समझौता एक्सप्रेस में हुए धमाके में 157 लोग मारे गए और दर्जनों घायल हुए।
- 18 मई, 2007— हैदराबाद की मक्का मस्जिद में आतंकवादियों द्वारा 14 व्यक्ति मारे गए और 50 से ज्यादा घायल हुए।

जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद

वर्ष 1971 की शर्मनाक हार को पाकिस्तान भूला नहीं पाया। उस समय उसके एक लाख सैनिकों ने भारतीय सेना के आगे आत्मसर्मण किया था और वे युद्धबंदी बना दिए गए थे। आज पाकिस्तान चीन और अमेरिका से दोस्ती कर उनकी मदद से अत्याधुनिक शस्त्रों से लैस परमाणु शक्ति बन बैठा है। इसी के बल पर वह बिना सेना भेजे ही महज आतंकवादियों के सहारे ही हमारी सीमा की धज्जियां उड़ाने में जरा भी परहेज नहीं कर रहा है। आतंकवादी हमलों के जरिए भारत को लहूलुहान करने की जिस नीति पर पाकिस्तान चल रहा है, उसका कोई सशक्त और जल्दी इंतजाम किया जाना बहुत आवश्यक हो गया है। पूर्वी पाकिस्तान में घुस आए एक करोड़ घुसपैठियों को उनके देश वापस भेजने के लिए पाकिस्तान के दो टुकड़े कर वर्ष 1971 में जिस वीरता और सूझ-बूझ का परिचय दिया, उसे पुनः दोहराने की आवश्यकता है। जम्मू-कश्मीर पिछले 16 वर्षों से सीमापार से होने वाले आतंकवाद से लड़ रहा है वहां 13,000 नागरिक और 4,000 सुरक्षा बल कर्मियों ने अपनी जाने गंवाई हैं। पिछले 6 वर्षों में जम्मू-कश्मीर में आतंकवादी गतिविधियों में मारे गए व्यक्तियों का ब्योरा तालिका में देखें–

जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद

वर्ष	घटनाएं	मारे गए नागरिक	मारे गए सुरक्षा बलों के कार्मिक	मारे गए आतंकवादी	घुसपैठ का अनुमान
2001	4522	919	536	2020	2417
2002	4038	1008	453	1707	1504
2003	3401	795	314	1494	1373
2004	2565	707	281	976	537
2005	1990	557	189	917	597
2006	1667	389	151	593	573

आतंकवाद का विस्तार नक्सलवाद/माओवाद

भारत में आतंकवाद अब केवल जम्मू-कश्मीर राज्य तक सीमित नहीं रह गया है। जम्मू-कश्मीर के हालात चिंता का विषय है किन्तु असम की स्थिति कश्मीर से भी ज्यादा चिंताजनक है। वहां चालू वर्ष के पहले सात महीनों में जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद के शिकार हुए लोगों से अधिक संख्या में लोग आतंकवादियों के हाथों मारे गए। इस अवधि में आतंकवादियों के हाथों मारे गए कुल 480 नागरिकों में से 169 को अकेले असम में उल्फा उग्रवादियों द्वारा मौत के घाट उतारा गया, जबकि जम्मू-कश्मीर में यह संख्या 124 है। असम के साथ लगता मणिपुर छोटा-सा राज्य है, जिसकी आबादी जम्मू-कश्मीर की कुल आबादी का पांचवा हिस्सा है। वहां आतंकवादियों के हाथों 95 लोग मारे गए। एक अनुमान के अनुसार पिछले तीन वर्षों में नक्सलावादियों के द्वारा 411 अधिकारियों को मौत के घाट उतारा जा चुका है।

नक्सलवाद का खतरा निरंतर चिंता का विषय बना हुआ है। नक्सलवादी, प्रशासनिक और राजनैतिक संस्थानों की अकर्मण्यता द्वारा सृजित माहौल में कार्य करते हैं। वे स्थानीय मांगों को भड़काते हैं और जनसंख्या के शोषित वर्गों के मध्य विद्यमान अविश्वास और अन्याय का लाभ उठाते हैं। नक्सलवाद भी आतंकवाद की तरह ही एक राष्ट्रीय समस्या है। लिहाजा उसका हल भी अंतर्राज्यीय स्तर पर निकलेगा।

आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश व छत्तीसगढ़ की तरह पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, बिहार और झारखंड में उग्र नक्सली समूहों ने आंतरिक सुरक्षा के लिए कड़ी चुनौती पेश की है। देश की आंतरिक सुरक्षा को पहली चुनौती 1967 में मिली थी, जब नक्सलबाड़ी में वर्ग शत्रुओं को समाप्त करने के लिए सशस्त्र क्रांति का बिगुल बजाया था। उसके बाद नक्सल आंदोलन पूरी तरह से मरा नहीं। नक्सली समूह देश के ग्रामीण क्षेत्रों में अपना प्रभाव बढ़ाने और आंतरिक सुरक्षा के माहौल को बिगाड़ने की अपनी कोशिशें जारी रखे हुए हैं।

आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, बिहार, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र आदि कई ऐसे राज्य हैं, जहां माओवादी आम लोगों की जिंदगी के दुश्मन बने हुए हैं। वर्ष 2006 में वामपंथी उग्रवादियों ने 266 लोगों के खून से अपने हाथ रंगे थे। जम्मू-कश्मीर में सुरक्षा बलों ने 509 आतंकवादियों का सफाया किया, जबकि जिन वामपंथी उग्रवादियों को मौत के घाट उतारा गया उनकी संख्या 348 थी। वर्ष 2003 से 2006 के दौरान आंध्र प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, केरल, कर्नाटक, हरियाणा में नक्सलवादी हिंसा का ब्योरा इस प्रकार है—

नक्सलवादी हिंसा

वर्ष	घटनाएं	मारे गए नागरिक	मारे गए सुरक्षा बलों के कार्मिक	मारे गए नक्सलवादी
2003	1597	410	105	216
2004	1533	466	100	87
2005	1608	524	153	255
2006	1509	521	157	272

असम, त्रिपुरा, नगालैंड, मणिपुर, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, और मिजोरम में जो भारत के कुल भू-भाग का 8.06 प्रतिशत है की वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या 3.88 करोड़ है। यह क्षेत्र विभिन्न भाषा, बोलियां और सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान वाली 200 जातियों वाले समुदाय की जटिल संस्कृति का प्रतीक है। वर्ष 2001 से 2006 तक पूर्वोत्तर राज्यों में हिंसा का ब्योरा इस प्रकार है—

पूर्वोत्तर राज्यों में हिंसा

वर्ष	घटनाएं	मारे गए आतंकवादी	मारे गए सुरक्षा बलों के कार्मिक	मारे गए नागरिक
2001	1335	572	175	600
2002	1312	571	147	454
2003	1332	523	90	494
2004	1234	404	110	414
2005	1332	405	70	393
2006	1366	395	76	309

आतंकवाद के कारण

अपमान की खाद हो, नफरत की मिट्टी और समर्थन रूपी पानी की बूंदें, तो एक छोटे से उद्देश्य की ज्वालामुखी फूटता है, उसे खुद अपने स्वरूप और अंदर की विनाशकारी शक्तियों का अंदाजा नहीं होता और जड़ पर आतंकवाद का छोटा-सा पौधा देखते ही देखते एक वट वृक्ष बन जाता है। जब खून के एक-एक कतरे में आक्रोश भर जाता है, दिल में उसे समाहित रखे रहने की ताकत और हिम्मत नहीं बचती तो ऐसे में जो वह इतनी तबाही मचाता है कि समाज, उसकी मर्यादाएं और कायदे-कानून कुछ भी उसको सीमित नहीं रख सकते।

किसी भी प्रकार के आतंकवाद, क्रांति या आंदोलन को किसी कारण विशेष से संबंद्ध कर देना नादानी है। आतंकवाद एक ऐसी प्रतिक्रिया है, जो कई एक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक कारणों के ऊहापोह की उपज है। यह जरूरी नहीं होता कि एक देश या क्षेत्र विशेष में आतंकवाद के जो कारण रहे हों, वे दूसरी जगह भी होने से वहां आतंकवाद जन्म लें। अलग-अलग देशों या क्षेत्रों के लोगों की सहनशक्ति, संवेदनाओं और जानकारियों में अंतर होता है। आतंकवाद के

अनेक कारणों में से कुछ कारण निम्न हैं– आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और सैन्य आदि।

कमियां/सुझाव

आतंकवाद का स्वरूप व उद्देश्य चाहे कुछ भी हो, इसका भौगोलिक क्षेत्र चाहे सीमित हो या विस्तृत, किन्तु यह तो स्पष्ट है कि आतंकवाद हमारे जीवन को असुरक्षित व अनिश्चित बना रहा है। आतंकवाद मानव जाति के लिए कलंक है तथा इसका उन्मूलन अत्यंत आवश्यक है। भारत ने आतंकवाद की समस्या को शांतिपूर्वक निपटने का हरसंभव प्रयास किया लेकिन अब इस समस्या से निपटने के लिए कुछ और अधिक कारगर और कड़े उपाय करने होंगे।

प्रत्यार्पण संधि

दुनिया के 19 देशों के साथ भारत की प्रत्यार्पण संधि या समझौता है, लेकिन पाकिस्तान शामिल नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय कानून के अंतर्गत प्रत्यार्पण यानी आरोपियों को सीमा पार भेजने का कोई समझौता पाकिस्तान के साथ नहीं है। दोनों में से कोई भी देश अपने नागरिकों को दूसरे को सौंपने के लिए मजबूर नहीं है। इसलिए दो तरफा संधि या समझौते की जरूरत है।

कानून का अभाव

व्यवस्था और न्याय का हमारी प्रणाली अपने बोझ के नीचे दबी पड़ी है। उसमें वैसी चुस्ती नहीं, जिसकी जरूरत जंग के मैदान में होती है। आतंकवाद से लड़ने के लिए हमारे पास कोई कानून है ही नहीं। देश का काम इंडियन पीनल कोड, क्रिमिनल प्रोसीजर कोड और एविडेंस एक्ट से ही चल रहा है, जो 1863 में बनाए गए थे। जिन पश्चिमी लोकतंत्रों की तर्ज पर हमारा शासन और कानून का सिस्टम बना है, उन्होंने भी बदलते वक्त के हिसाब से जड़ हो गए कानूनों से छुटकारा पा लिया है और आतंकवाद से लड़ने के नए औजार गढ़ लिए हैं। इसे देखते हुए कानूनों में काफी फेर-बदल करने की आवश्यकता है।

सूचना टेक्नोलॉजी का अभाव

भारत में आंतरिक सुरक्षा को लेकर तकनीकों की खस्ता हालत है। जहां दूसरे देश उपग्रहों के जरिये सड़कों और बाजारों पर नजर रख रहे हैं, वहीं हमारे यहां यह काम पुलिस के उन सिपाहियों को दिया गया है, जिनके हाथ में एक अदद लाठी होती है। पुलिस थानों में अपराधियों के रिकार्ड अब भी धूल भरी अलमारियों में पड़े हैं। अधिकतर पुलिसकर्मी कंप्यूटर का इस्तेमाल करना नहीं जानते। दुनिया के सभी प्रमुख महानगरों में पुलिस द्वारा अपराधियों का पीछा करने के लिए या उन्हें समय रहते धर-दबोचने के लिए हेलीकाप्टरों का इस्तेमाल आम बात है पर भारत में पुलिस अब भी जीपों का ही इस्तेमाल करती है। राज्य स्तर पर कानून और व्यवस्था के मामले में नेताओं की भारी दखलंदाजी है और राष्ट्रीय स्तर पर कई मंत्रालय, सलाहकार समितियां और अन्य कई ऐसे संगठन हैं, जिनकी अपनी-अपनी डफली और अपना-अपना राग है, जबकि चीन जैसे देशों में सेना, पुलिस और अफसरशाही के बीच समन्वय बनाने पर खास जोर दिया जा रहा है।

अपर्याप्त सुरक्षाकर्मी

भारत में सुरक्षा कर्मियों की संख्या काफी कम है। आतंकवाद के विशेषज्ञ श्री अजय साहनी के अनुसार भारत में एक लाख की जनसंख्या की सुरक्षा के लिए 122 पुलिसकर्मी हैं, जबकि विकसित पश्चिमी देशों में 250-500 होते हैं। संयुक्त राष्ट्र का सुझाव है कि एक लाख लोगों की सुरक्षा के लिए कम से कम 222 पुलिस वाले होने चाहिए। हमें इस बात से सबक लेना होगा कि

अमरीका में सितंबर 11 के हमले के बाद राष्ट्रपति बुश ने पहला काम यह किया कि होमलैंड सेक्युरिटी के नाम एक नया सुरक्षा विभाग स्थापित किया। आतंकवाद से जुड़ी हर बात को यह विभाग देखता है। इसके अतिरिक्त यह विभाग एयरपोर्ट पर सुरक्षा जांच से लेकर विदेशियों पर निगरानी रखना, बाहर से आई पूंजी किस बैंक के किस खाते में जाती है, उस पर कड़ी निगाह रखता है।

आतंकवादियों की संपत्ति जब्त करना

अमरीका ने 322 लोगों, संगठनों और उनके समर्थकों को आतंकवादी करार देते हुए उनकी संपत्ति जब्त की है। इस संपत्ति का मूल्य 13.68 करोड़ डॉलर से ज्यादा है। इस रोक का मकसद ऐसे पैसे और लोगों की आवाजाही पर रोक लगाना, जो आतंकवाद की सहायता करते हैं। एक अनुमान के अनुसार, दाऊद इस समय 7,000 करोड़ रुपये से ज्यादा की संपत्ति का मालिक है भारत के खिलाफ वह पाकिस्तान का बहुत बड़ा हथियार है। इस आर्थिक साम्राज्य को अगर ध्वस्त किया जा सके तो आतंकवाद की कमर तोड़ी जा सकती है। इसके लिए सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव 1373 के रूप में एक तरीका है कि ग्लोबल लीडरशिप से आतंकवाद के आर्थिक जाल को काटा जाए। इसके माध्यम से सुरक्षा परिषद उन देशों के खिलाफ कार्रवाई करे जो आतंकवाद की मदद कर रहे हैं। जब आतंकवाद के खजाने सूखने लगेंगे, तो उसका साम्राज्य अपने आप कमजोर पड़ जाएगा।

दृढ़ इरादा

अमेरिका के वर्ल्ड ट्रेड टॉवर्स पर ओसामा बिन लादेन के अलकायदा ने आतंकवादी हमला किया तो अमेरिका ने आतंकवाद को खत्म करने के लिए न केवल कसम खाई बल्कि आतंकवाद के खिलाफ आनन-फानन में एक अंतर्राष्ट्रीय गठजोड़ भी तैयार करके अलकायदा के केंद्र अफगानिस्तान पर हमला बोल दिया। इससे ओसामा बिन लादेन के तालिबानों की छुट्टी कर दी। बेशक ओसामा बिन लादेन अभी तक अमेरिका के हाथ नहीं लगा है लेकिन अभी भी अमेरिका चुप नहीं बैठा है। आतंकवाद के एक हमले के बाद अमेरिका ने जो कर दिखाया वैसा कुछ कर दिखाने का इरादा और संकल्प भारत को भी दिखाना होगा।

सूचना तकनीक का इस्तेमाल

पश्चिमी देशों ने आतंकवाद और आंतरिक सुरक्षा के दूसरे खतरों से निपटने की ओर गंभीरता से ध्यान दिया जा रहा है। इसके लिए वे किसी बड़े हादसे का इंतजार नहीं करते, बल्कि आगे बढ़कर घटनाओं को रोकने का प्रयास करते हैं। आस्ट्रेलिया, अमेरिका और यूरोप के कई देशों में हवाई अड्डों और अन्य सार्वजनिक स्थानों पर डिजिटल कैमरे छुपा कर लगा दिए गए हैं, जो लगातार कंट्रोल रूम में तस्वीरें भेजते रहते हैं। इस आधार पर अपराधियों के बारे में कंप्यूटरीकृत डाटा बेस में इन तस्वीरों में आ रहे लोगों की पहचान की प्रक्रिया चलती रहती है। इसके अलावा सूचना तकनीक का दुरुपयोग रोकने के लिए आतंकवादी संगठनों व अन्य अपराधियों के कंप्यूटर या ई-मेल कोड तोड़ने की ओर ध्यान दिया जा रहा है। जाली कागजात या नकली वेष का सहारा लेकर अपराधी बच न पाए, इसके लिए जैव-रसायन तकनीकी का भी इस्तेमाल किया जा रहा है।

संविधान/कानूनों का पालन

आज जिन पश्चिमी देशों में सबसे ज्यादा सुरक्षा है, वहीं सबसे ज्यादा संविधान का पालन होता है और कानून की नजर में सब बराबर हैं। ऐसा नहीं है कि एक व्यक्ति की एफ.आई.आर. दर्ज होती है, दूसरे की नहीं, एक के खिलाफ पोटा लगता है और दूसरे के खिलाफ उसी जुर्म के लिए कोई मामूली दफा लगाई जाती है। हमारे यहां यह कानूनों में पेचीदगियों का ही तो कमाल

है कि वर्ष 1993 के मुम्बई बम विस्फोटों के दोषियों को टाडा कोर्ट अब जाकर सजा सुना सका है। बड़े-बड़े बोलों और कड़े-कड़े कानूनों से तब तक कोई फायदा नहीं होने वाला, जब तक बुनियादी ईमानदारी नहीं बरती जाएगी।

बहु-आयामी-बहुपक्षीय दूरस्थ युद्ध

आतंकवाद एकांगी समीकरण नहीं है। यह एक बहुआयामी- बहुपक्षीय दूरस्थ युद्ध है। इस युद्ध के प्रभाव तथा तौर-तरीके हमारे देखे-पहचाने हो सकते हैं क्योंकि वे बहुधा आदिम खूंखार तरीके हैं, जो मनुष्यों को मार देने की रणनीति पर कार्य करते हैं। किंतु उनका संचालन बहुत सभ्य समाजों और साफ-सुथरे हाथों से किया जाता है, जिन्हें ढूंढना ज्यादा जरूरी काम है, बल्कि इसके कि हम अपना समय आतंकवाद की भर्त्सनाओं में गंवा दें।

हवा में पैदा नहीं होते

पिछले तीन वर्षों में जितने लोग भारत में आतंकवाद के शिकार हुए हैं, इतने दुनिया के किसी भी देश में नहीं हुए। आतंकवादी हवा में तो पैदा नहीं होते। भारत में आतंकवादियों पर मुकदमें चलाने में 15-15 साल लग जाते हैं। आतंकवादियों को कौन शरण देता है? आतंकवादी मछली के लिए वे लोग पानी का काम करते हैं जो उनके प्रति सहानुभूति रखते हैं। उन्हें खाने-पीने, रहने-सहने, घूमने-फिरने और छिपने-छिपाने में मदद करते हैं। ऐसे व्यक्तियों के प्रति निर्ममता का बर्ताव होना चाहिए। इस बात की जरा भी परवाह नहीं की जानी चाहिए कि उनका मजहब क्या है, जाति क्या है और सामाजिक हैसियत क्या है। यहां तक कि आतंकवादियों को मदद करने वालों को ही नहीं बल्कि उनके प्रति सहानुभूति रखने वालों को भी सजा मिलनी चाहिए। उन्हें यह पता होना चाहिए कि अगर हम पर शक हो गया तो हम भी मारे जाएंगे जैसे गेंहू पिसे-न-पिसे घुन जरूर पिस जाता है।

राजनैतिक इच्छा शक्ति

जब भी कभी कोई आतंकवादी आक्रमण होता है, तो उसके बाद नेताओं द्वारा मगरमच्छी आंसू बहाए जाते हैं। मृतकों के परिवार के सदस्य को छोटी-मोटी रकम दे दी जाती है और यह कह कर पिंड छुड़ा लिया जाता है कि यह आतंकवादी गतिविधियां करने वाले आईएसआई के पाकिस्तानी एजेंट हैं। आतंकवाद के संपूर्ण दर्शन को मानवता विरोधी मानना होगा तथा इसके उन्मूलन के लिए विश्वस्तरीय रणनीति बनानी होगा। दुनिया के प्रत्येक देश व सम्प्रदाय को इसके विरुद्ध एकमत होना होगा। सभी सम्प्रदायों को यह स्पष्ट रूप से समझना होगा कि आतंकवादियों का कोई धर्म नहीं होता। राजनैतिक दलों को भी अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से विमुख होकर आतंकवादी गतिविधियों का अनुचित समर्थन बंद करना होगा।

आतंकवाद से लड़ने का प्रशिक्षण

अगर आतंकवादी घटनाओं का हिसाब लगाते हैं तो शायद ही कोई दिन होगा, जब हमारे देश में कोई वारदात न हुई है। आतंकवाद के खिलाफ जंग हम भारतीयों को ही लड़नी है। यह बात हमें साफ तौर पर समझ लेनी होगी। यह लड़ाई दूसरे लोग हमारी खातिर नहीं लड़ेंगे। इस संकट से तभी निपटा जा सकता है, जब आम लोग आतंकवाद से बचाव का तरीका जानें। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में पहली **यूरोपियन टेरेरिज्म सरवाइवल कोर्स** शुरू करने की योजना बनाई गई है। यह एक दिन का कोर्स होगा और इसकी फीस डेढ़ सौ पाउंड रखी गई हैं। इसमें आम लोगों को आतंकवाद से बचने की ट्रेनिंग दी जाएगी। इसी प्रकार का प्रशिक्षण यदि भारत में भी दिया जाए तो आतंकवाद का मुकाबला किया जा सकता है।

नागरिकों को निजी सुरक्षा के अधिकार की जानकारी दी जाए। हमारे देश में हर नागरिक को निजि सुरक्षा का हक है। इस रक्षा में अगर किसी की जान भी चली जाए, तो कुछ मामलों में वह माफी के काबिल है। आतंकवादी को मारना गुनाह नहीं है। यह बात प्रशिक्षण कार्यक्रम में बताई जानी चाहिए कि कैसे अपने आंख-कान खुले रखकर लोग आतंक को चकमा दे सकते हैं। मोबाइल या कंप्यूटर का आतंकवाद में कैसे इस्तेमाल होता है, किसी वारदात के बाद क्या करना है, न्यायालयिक विशेषज्ञ के आने तक सबूतों को कैसे बचाए रखना है, एम्बुलेंस और मेडिकल सुविधा का कैसे इंतजाम करना है और घायलों की कैसे मदद करनी है। इस बात की जानकारी प्रशिक्षण के दौरान दी जानी चाहिए। प्रशिक्षित लोगों को अधिकारी बनाया जा सकता है, जिसका प्रावधान हमारे कानूनों में भी है। यदि ऐसा किया जाता है तो इसे निस्संदेह आतंकवाद से निपटने में महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है।

आतंकवाद/नक्सलवाद/साम्प्रदायिक हिंसा से निपटने के लिए जनता को जागृत रहना होगा। अगर लोग जागरूक रहें और देश तथा समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को समझे, तो कोई भी आतंकवादी अपनी गतिविधियों को अंजाम नहीं दे सकेगा। आम आदमी के चौकन्ना रहे बिना खुफिया तंत्र कुछ नहीं कर सकता। हमें हेलन एडम्स केलर की इस बात को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए, **'हम अकेले बहुत कम कर सकते हैं और मिलकर बहुत कुछ।'**

❐

घरेलू हिंसा एवं पुलिस की भूमिका

विनोद मिश्रा
रिसर्च एसोसिएट, शोध परियोजना
गृह मंत्रालय भारत सरकार
ई-1/8 पुलिस लाईन, नेहरु नगर, भोपाल-462003
(म.प्र.)

भारतीय समाज में नारी को अर्धांगिनी, धर्म पत्नि, शक्ति रूपा, लक्ष्मी, सरस्वती, मां, बहन आदि अनेकों रूपों में पहचाना जाता है यह समाज का एक रूप है। समाज के दूसरे रूप में महिलाओं के साथ हर रोज घटिया होने वाली घरेलू हिंसा जैसे-दुर्व्यवहार मार-पीट, शारीरिक वा मानसिक प्रताड़ना, बलात्कार जैसी हिंसा साधारण बात है। साधारणतः यह माना जाता है कि घर महिला को सुरक्षा, शांति एवं सुख प्राप्त करने की दृष्टि से स्वर्ग के समान होता है, परंतु भारतीय समाज की विडंबना है कि ज्यादातर महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा का ही व्यवहार होता है। जहां भारतीय संस्कृति में एक तरफ महिला को लक्ष्मी का स्वरूप मानकर पूजा की जाती है वहीं दूसरी ओर यही समाज दहेज के लालच में बिना दहेज लाए इन्हें स्वीकार करने से कतराता है। दहेज ना लाने की स्थिति में अनेक कन्याओं, बहुओं को आत्महत्या करने तक को बाध्य होना उनकी मजबूरी बन जाती है, अनेकानेक बहुओं को गैस सिलेंडर व स्टोव फटने की आड़ में जिंदा जला दिया जाता है।

किसी व्यक्ति द्वारा चोट पहुंचाने या तोड़ने फोड़ने के इरादे से किसी दूसरे व्यक्ति या चीज के खिलाफ ताकत का इस्तेमाल करना हिंसा है जो प्रायः किसी फायदे के लिए की जाती है। हिंसा एक ऐसी दबावकारी प्रक्रिया है जो दूसरे को दबाने के लिए प्रयोग की जाती है इसके पीछे अनेक उद्देश्य हो सकते हैं। साधारणतः दूसरे से अपनी इच्छा मनवाने के लिए, अपनी ताकत दिखाने के लिए, खुद को ताकतवर महसूस करने के लिए इस्तेमाल की जाती है।

घरेलू हिंसा की परिभाषा :

भारत में 13 दिसंबर 2005 महिलाओं पर घरेलू हिंसा निरोधक विधेयक को अधिनियम के रूप में पारित किया। इसी अधिनियम की धारा-3 में घरेलू हिंसा को इस प्रकार परिभाषित किया गया है :

"परिवार में किसी भी बालिका या महिला के साथ पुरुष वर्ग या महिला वर्ग द्वारा किया जाने वाला हर ऐसा कार्य घरेलू हिंसा माना जाएगा जिसमें महिला या बालिका का जीना मुश्किल हो जाए या उसे मानसिक शारीरिक कष्ट हो उनके साथ अमानवियता या क्रूरता करना भी हिंसा माना गया है। दहेज के लिए महिला को प्रताड़ित करना महिला वर्ग को कानूनी, सामाजिक, शारीरिक व आर्थिक आवश्यकताओं से वंचित रखना और बच्चा या लड़का ना होने पर व्यंग करना या प्रताड़ित करना भी घरेलू हिंसा मानी जाएगी।"

'महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा' अधिनियम 2005 धारा-4 के अनुसार कोई व्यक्ति जिसे घरेलू हिंसा की जानकारी मिले या प्राप्त हो वह संबंधित अधिकारी को सूचना दे सकता है और इसी अधिनियम की धारा 20 में वर्णित है कि मजिस्ट्रेट प्रताड़ित को मुआबजा, कानूनी मदद, सुरक्षित आवास, चिकित्सकीय सुविधा आदि दिला सकता है। जो व्यक्ति इन कानूनों का उल्लंघन करते हैं उन्हें एक साल की सजा या 20000 रुपया जुर्माना या दोनों ही रूपों में दंडित किया जा सकता है।

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र घरेलू हिंसा पर प्रकाश डालता है साथ ही निम्न लिखित उद्देश्यों को पूरा करता है :

1. घरेलू हिंसा की व्यापकता को बताना।

2. घरेलू हिंसा के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट करना।
3. घरेलू हिंसा के विभिन्न कारणों की व्याख्या करना।
4. घरेलू हिंसा को रोकने के उपाय बताना।
5. घरेलू हिंसा के दुष्परिणाम।

अध्ययन पद्धतिः

उपरोक्त लिखित उद्देश्य द्वितीय स्रोतों के माध्यम से विश्लेषित किए जाएंगे यह द्वितीयक स्रोत व्यापक इन्टरनेट सर्वे एवं क्राईम रिकार्ड ब्यूरो गृह मंत्रालय नई दिल्ली से लिए गए हैं।

1. घरेलू हिंसा की व्यापकता :

हिंसा के विभिन्न रूपों में सबसे घृणित महिला हिंसा होती है सामाजिक संरचना के लिए 'कन्या भ्रूण हत्या' है। अब महिला हिंसा मां के गर्भ से ही प्रारंभ हो जाती है भारतीय समाज में आज भी कन्या के जन्म को बोझ माना जाता है। वर्तमान समय में आधुनिक साधनों के द्वारा भ्रूण परीक्षण करके कन्या भ्रूण को गर्भ में ही समाप्त (खत्म) कर दिया जाता है। 0 से 6 के बच्चों का लिंगानुपात 1991 में 945 था, जो वर्ष 2001 में गिरकर 927 हो गया, जिसका कारण भ्रूण हत्या बताया गया। हमारे देश में 1901 में स्त्री-पुरुष अनुपात 972-1000 था जो 2001 में 933-1000 रह गया। वर्तमान परिवेश में नारी की नैतिकता का अपहरण, घर-परिवार, कार्यालय कहीं पर भी हो सकता है। आज 60 प्रतिशत कार्यकारी महिलाओं एवं 55 प्रतिशत छात्राओं का कहना है कि कार्य स्थल, स्कूल, कॉलेजों में ही उनके साथ यौन दुर्व्यवहार होना साधारण बात हो गई है। दिल्ली विश्वविद्यालय की 200 लड़कियों के अध्ययन में पाया गया कि 91.07 प्रतिशत लड़कियां कैम्पस में होने वाले यौन उत्पीड़न से पीड़ित थीं।

(महिला आयोग नई दिल्ली)

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में प्रत्येक 54वें मिनट में एक महिला के साथ बलात्कार की घटना होती है। जिसमें से मात्र 10 प्रतिशत घटनाओं की ही रिपोर्ट दर्ज की जाती है।

(विश्व स्वास्थ्य संगठन)

सेंटर फॉर वुमन्स डेवलपमेंट स्टडीज के अध्ययनों के अनुसार भारत में प्रत्येक 35वें मिनट में 1 बलात्कार अर्थात प्रतिदिन 42 महिलाओं के साथ बलात्कार होता है। यही नहीं भारत की लचर कानून व्यवस्था की वजह से प्रत्येक 5 बलात्कार में से 4 बरी हो जाते हैं।

(सेटर फॉर वुमन्स डेवलपमेंट स्टडीज)

एक मीडिया अध्ययन के अनुसार दिल्ली में 86 प्रतिशत महिलाएं स्वयं को असुरक्षित मानती हैं

(सी-वोटर)

2. घरेलू हिंसा के विभिन्न प्रकार :

घरेलू हिंसा शारीरिक प्रताड़ना मात्र न होकर मानसिक प्रताड़ना भी कहलाती है जिसका वर्णन आईपीसी में भी मिलता है घरेलू हिंसा को मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है जो इस प्रकार है–

निम्न तालिका के माध्यम से महिलाओं पर हो रहे अत्याचार को आसानी से समझा जा सकता है :

स.	अपराध शीर्ष	2001	2002	2003	2004	2005
1.	बलात्कार (धारा 376 भा.दं.सं.)	16075	15847	15847	18233	18359
2.	अपहरण एवं हरण (धारा 363 से 373 भा.दं.सं.)	14645	13296	13296	615578	15750
3.	दहेज से हुई मौतें (धारा 302/304 भा.दं.सं.)	6851	6208	6208	7026	6787
4.	उत्पीडन (धारा 498ए भा.दं.सं.)	49170	50703	50703	58121	58319
5.	छेड़खानी (धारा 354 भा.दं.सं.)	34124	32939	32939	34567	34175

6.	यौन उत्पीडन (धारा 509 भा.दं.सं.)	9746	12325	12325	10001	9984
7.	लड़कियों का आयात (धारा 366 बी भा.दं.सं.)	114	46	46	89	149
8.	सती प्रतिबंध अधिनियम 1987	0	0	0	0	1
9.	अनैतिक व्यापार अधिनियम 1956	8796	5510	5510	5748	5908
10.	महिलाओं का अभद्र प्रदर्शन अधिनियम 1986	2508	1043	1043	1378	2917
11.	दहेज प्रतिबंध अधिनियम 1961	2816	2684	2684	3592	3204
12	**कुल**	**143795**	**143034**	**140601**	**154333**	**155553**

(अ) शारीरिक प्रताड़ना (ब) मानसिक प्रताड़ना

(अ) शारीरिक प्रताड़ना : घरेलू हिंसा में शारीरिक प्रताड़ना की घटनाएं सार्वाधिक घटित होती हैं। इसमें शरीर को चोट पहुंचाई जाती है इसमें शारीरिक कष्ट होता है व शरीर के विभिन्न अंगों को नुकसान या क्षति होती है जिससे कई बार पीड़ित के मरने तक की आशंका हो जाती है इससे बाहरी तौर पर हम दिखने वाले शारीरिक हिंसा भी कह सकते हैं। इस प्रकार की हिंसा में एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति पर बल प्रयोग किया जाता है इसमें कई बार किसी भारी वस्तु से शुरू होकर धारदार हथियार या विस्फोटक हथियार का भी प्रयोग किया जा सकता है। जिसके कारण पीड़ित व्यक्ति को शारीरिक प्रताड़ना सहन करनी पड़ती है। इस प्रकार की प्रताड़ना के द्वारा पुरुष महिला को दबा कर रखने व स्वयं को श्रेष्ठ साबित करने की नीयत से करते हैं।

(ब) मानसिक प्रताड़ना : घरेलू हिंसा में पुरुष द्वारा महिलाओं को मानसिक रूप से भी प्रताड़ित किया जाता है मानसिक प्रताड़ना में महिलाओं के साथ शारीरिक प्रताड़ना के निष्कर्ष में डराकर, धमकाकर, उन्हें समाज व परिवार में अपमानित कर, उन्हें आर्थिक रूप से तंग कर आदि अनेक रूपों से महिलाओं को मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है। इन सभी तरह की प्रताड़ना के फल-स्वरूप महिला के अंतः मन पर इतना अधिक असर पड़ता है कि या तो वह महिला अपना मानसिक संतुलन खो बैठती है या फिर आत्महत्या करने लिए बाध्य हो जाती है।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि जिस समाज में महिला को शक्ति का रूप दुर्गा, विद्या का रूप सरस्वती, धन का रूप लक्ष्मी, सती, सीता आदि अनेक रूपों में पूजी जाती थी उसी समाज में महिला को अनेकानेक रूप से प्रताड़ना का शिकार होना पड़ता है।

3. घरेलू हिंसा के विभिन्न कारणः

घरेलू हिंसा एक घोर निंदनीय अपराध है जो भारतीय समाज में ही नहीं बल्कि विश्व स्तर पर उग्र रूप से एक गंभीर समस्या बनी हुई है। घरेलू हिंसा के अनेक कारण निम्न लिखित है :

(अ) ऐतिहासिक कारण (ब) शिक्षा का निम्न स्तर (स) पितृ सत्तात्मक व्यवस्था (द) आर्थिक आश्रितता (इ) कुरीतियां व परंपराएं

(अ) ऐतिहासिक कारण : प्राचीन भारतीय समाज में महिलाओं को शिक्षा ग्रहण करने के अधिकारों से वंचित रखा जाता था उन्हें मात्र घर संभालने वाली

महिला व पुरुषों की आज्ञाकारणी बना कर रखा जाता था। शिक्षा ग्रहण ना कर पाने से बहुत लंबे समय तक शिक्षा से दूर रहने के कारण महिलाएं समाज में बहुत ज्यादा पिछड़ती चली गई व अपने आप को समाज से अलग-थलग महसूस करने लगी। जिससे महिलाएं समाज की मुख्य धारा से कट गई। मनु स्मृति के अनुसार महिला जीवन पर्यंत पुरुषों पर आश्रित रहेंगी।

(ब) शिक्षा का निम्न स्तर : शिक्षा के निम्न स्तरीय होने के कारण आजादी के 60 वर्षों बाद भी भारत में महिलाएं मात्र 50 प्रतिशत ही शिक्षित हैं। आज भी शिक्षा के प्रचार प्रसार के साधन निम्न स्तरीय होने की वजह से महिलाओं में अपने अधिकारों व हक की जानकारी नहीं हो पाती जिसकी वजह से वे घरेलू हिंसा का शिकार बनती हैं व उस हिंसा को सहन करने से घरेलू हिंसा को और अधिक बढ़ावा मिलता है। वहीं दूसरी ओर पुरुष अपने आप को ताकतवर सिद्ध करने के लिए महिलाओं पर घरेलू हिंसा रूपी अत्याचार करता है। जिसे महिलाएं अपनी किस्मत समझ कर सहन करती चली जाती हैं।

(स) पितृ सत्तात्मक व्यवस्था : भारतीय समाज में पितृ सत्तात्मक व्यवस्था का सामाजिक प्रचलन भी महिलाओं पर घरेलू हिंसा का एक कारण है। इस व्यवस्था के अंतर्गत पिता के नाम से परिवार का नाम चलता है व घर परिवार संपत्ति का मालिक पुरुष ही होता है एक पुरुष से उसके बेटों व फिर उनके बेटों में परिवार की बाग-डोर चली जाती है। वहीं दूसरी ओर औरतों को दबा कर रखने के लिए घरेलू हिंसा का प्रयोग किया जाता है घर परिवार में निर्णय लेने का हक सिर्फ पुरुषों को ही होता है परिवार का मुखिया भी पुरुष ही होता है। इस प्रकार समाज में घरेलू हिंसा को बढ़ावा देने में पितृ सत्तात्मक व्यवस्था भी एक कारण है।

(द) आर्थिक आश्रयता : भारतीय समाज में आज भी महिलाओं को आर्थिक रूप से अपने पतियों पर ही निर्भर रहना पड़ता है जिसकी वजह से वे अपने आप को निरीह समझती हैं व उनके साथ जो भी घरेलू हिंसा होती है उसे वे पूर्व जन्मों का फल समझ कर झेलती चली जाती हैं व कहीं उनके मन में यह भी रहता है कि हमारी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी इन्हीं पुरुषों के द्वारा होती है अतः वे घरेलू हिंसा का विरोध भी नहीं कर पातीं। आर्थिक स्वतंत्रता व अन्य विकल्प ना होने से महिलाएं अपने जीवन यापन के लिए जैसा जीवन मिलता है उसे स्वीकार कर लेती हैं।

(इ) कुरीतियां व परंपराएं : भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियां व प्राचीन परंपराएं विद्यमान हैं जिनमें बाल विवाह, कन्या भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा, विधवा विवाह ना होना आदि सामाजिक कुरीतियां प्रचलित हैं जिससे महिलाओं को घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ता है। भारत में अनेक समुदायों में बहु विवाह जैसी पारंपरिक बुराईयां विद्यमान हैं जिसके चलते अनेक समाजों (समुदायों) में एक पत्नी के जीवित होते हुए भी दूसरी पत्नी रख लेते हैं जो कि एक सामाजिक बुराई है। भारतीय समाज में दहेज प्रथा का प्रचलन अत्यन्त गंभीर समस्या बनी हुई है। जिससे प्रतिदिन अनेक महिलाओं को जिंदा जला कर मार दिया जाता है जो कि एक जघन्य अपराध है भारत वर्ष में कन्या भ्रूण हत्या भी एक गंभीर समस्या है। कन्या भ्रूण को गर्भ में ही समाप्त कर दिया जाता है जिससे समाज में दिनों-दिन महिलाओं की जनसंख्या का ग्राफ घटता चला जा रहा है।

4. घरेलू हिंसा को रोकने के विभिन्न उपाय :

प्रस्तुत शोध पत्र उपरोक्त परिदृष्य के आधार पर निम्न लिखित उपायों के आधार पर घरेलू हिंसा को रोकने (नियंत्रित) के निम्न सुझाव देता है :

1. सामाजिक सहयोग

2. *महिलाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण*
3. *स्वयं सेवी संस्थाओं के द्वारा आत्म निर्भरता के प्रति जागरूकता*
4. *मनोवैज्ञानिक परामर्श*
5. *विद्यालयीन शिक्षा में महिलाओं के अधिकारों से संबंधित विषयों का समावेश*
6. *शिक्षा के स्तर को उच्च बनाना*

1. सामाजिक सहयोग : भारतीय परिदृष्य में घरेलू हिंसा को रोकने में सामाजिक सहयोग की सबसे बड़ी आवश्यकता है समाज को अपनी महिलाओं के प्रति नकारात्मक सोच को त्याग कर सकारात्मक रूप अपनाना चाहिए विभिन्न सामाजिक संगठनों को घरेलू हिंसा को उखाड़ फेंकने के लिए आगे आना चाहिए व उन्हें सहयोग करना चाहिए। समाज को इस हकीकत को मानना चाहिए कि आज महिलाओं ने अपने आप को हर क्षेत्र में कार्य करके साबित कर दिया है कि आज महिला किसी भी तरह से पुरुषों से पीछे नहीं है चाहे वह राजनीति, उद्योग, व्यवसाय, अंतरिक्ष, खेल, अभिनय, शिक्षा, नौकरी, सांस्कृतिक एवं कोई भी क्षेत्र हो हर जगह महिलाएं पुरुषों से बेहतर कार्य कर रहीं हैं।

2. महिलाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण : घरेलू हिंसा को रोकने का एक कारगर उपाय यह भी है कि महिलाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान कराया जाना चाहिए व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने से महिलाएं अपने आप को निराश्रित महसूस नहीं करेंगी वह स्वयं आगे बढ़कर जिंदगी की चुनौतियों का सामना कर समाज में अपनी आवाज बुलंद कर सकेंगी व अपने ऊपर हो रहे घरेलू हिंसा रूपी अत्याचार का विरोध कर सकेंगी।

3. स्वयं सेवी संस्थाओं के द्वारा आत्म निर्भरता के प्रति जागरूकता : घरेलू हिंसा को रोकने के लिए विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं व संगठनों को आगे आकर महिलाओं को आत्म निर्भर बनाने हेतु उनमें जागरूकता को फैलाया जाना चाहिए जिसके द्वारा महिलाओं में चाहे वे गांव की महिला हों या शहर की महिलाएं हो उनमें यदि आत्म निर्भरता आ जाएगी तो वे स्वयं घरेलू हिंसा को सहन करना बंद कर देंगी।

4. मनोवैज्ञानिक परामर्श : वर्तमान भारत में बढ़ रहीं घरेलू हिंसा को रोकने के लिए मनोवैज्ञानिक परामर्श व सलाह केंद्र अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं आज भी भारतीय महिलाओं के मन में पुरुष प्रधान समाज ने उसे प्राचीन परंपराओं, रीति-रिवाजों व आडंबरों की जंजीरों में जकड़ी हुई महिला का रूप बना दिया है। इन कुरीतियों से ग्रसित परंपराओं की जंजीरों की बेडियों को तोड़ने के लिए मनोवैज्ञानिक सहायता व परामर्श केंद्रों की आवश्यकता है जिसके द्वारा महिला के मन में घर से बाहर निकलने पर होने वाले डर को निकाला जा सके व उन्हें 21वीं सदी की नारी की बढ़ती ताकत, महत्ता, पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाली नारी की पहचान कराकर भारतीय समाज में होने वाले घरेलू हिंसा जैसे घृर्णित कृत्य को रोका जा सकता है।

5. विद्यालय स्तर की शिक्षा में महिलाओं के अधिकारों संबंधित विषयों का समावेश : भारत की 70 प्रतिशत आबादी गांव में निवासरत है जिसमें से कुल महिलाओं की जनसंख्या का 50 प्रतिशत ही शिक्षित है परंतु विडम्बना यह है कि उन्हें अपने अधिकारों से अनभिज्ञता रहती है। आज हमारी विद्यालयीन शिक्षा में ही महिलाओं के अधिकार संबंधी विषयों को समावेशित किए जाने की आवश्यकता है जिससे उन्हें अपने अधिकार संबंधी कानूनों का ज्ञान हो सके अधिकांश कन्याओं को विद्यालयीन शिक्षा ग्रहण कर उन्हें घर परिवार की जिम्मेदारियों में बांध दिया जाता है व इन जिम्मेदारियों को निभाते-निभाते उन्हें जायज-नाजायज तरीकों से घरेलू हिंसा का शिकार बनाया जाता है।

6. शिक्षा के स्तर को उच्च बनाना : भारत में प्रदान की जाने वाली शिक्षा को उच्च स्तरीय शिक्षा

पद्धति बनाकर हम इसके दूरगामी परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। शिक्षा में उच्च गुणवत्ता वाले विषयों के साथ महिला, ग्रामीण क्षेत्रों व गरीबी को ध्यान में रख कर शिक्षा पद्धति में विषयों का समावेश कर शिक्षा प्रदान कर व आधुनिक संसाधनों का समावेश कर महिलाओं की स्थिति में सुधार किया जा सकता है। इस प्रकार महिलाओं के शिक्षित होने पर इन संसाधनों व विषयों की जानकारी होने से उनपर होने वाले अत्याचार व घरेलू हिंसा में विराम लगाया जा सकता है।

5. घरेलू हिंसा के दुष्परिणाम :

घरेलू हिंसा मात्र अपराधी एवं पीड़ित तक ही सीमित ना रहकर बल्कि उस परिवार में रहने वाले समस्त व्यक्तियों पर भी अपना असर डालती है। इस घरेलू हिंसा का सबसे ज्यादा असर उस परिवार में रहने वाले बच्चों के कोमल हृदय पर पड़ता है। इसके अतिरिक्त घरेलू हिंसा के निम्न दुष्परिणाम हैं :

1. महिलाओं में असुरक्षा की भावना
2. परिवार का विघटन
3. कटु दाम्पत्य जीवन
4. बच्चों के अधूरे व्यक्तित्व का विकास
5. महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन
6. स्त्री पुरुष अनुपात में असंतुलन

1. महिलाओं में असुरक्षा की भावना : घरेलू हिंसा के परिणाम स्वरूप महिलाएं अपने आप को असुरक्षित महसूस करती हैं। यह भारत देश का दुर्भाग्य है कि जिस समाज को महिलाओं ने इतना सुंदर बनाया है जिनकी गोद में पल बढ़कर राष्ट्र के सभ्य प्रगतिशील नागरिकों का जन्म हुआ है उसी समाज में आज महिला अपने आप को असुरक्षित महसूस कर रही हैं इन महिलाओं के साथ घरेलू हिंसा बढ़ती चली जा रही है अनेक घटनाओं के कारण महिलाओं में असुरक्षा की भावना सदा बनी रहती है महिला अपने आप को स्वयं के घर में भी असुरक्षित महसूस करती हैं।

2. परिवार का विघटन : घरेलू हिंसा के परिणाम स्वरूप आज परिवारों का विघटन होता चला जा रहा है। महिलाओं पर सब से अधिक प्रताड़ना घरेलू हिंसा के रूप में पहुंचाई जा रही है। आज की महिलाएं यदि पुरुषों के साथ बराबरी का कार्य कर सकती हैं तो वे रोज-रोज की होने वाली घरेलू हिंसा को सहन नहीं करती जिसके परिणाम स्वरूप परिवारों में विघटन होता चला जा रहा है जिसके फलस्वरूप महिलाओं को एकाकी जीवन व्यतीत करना पड़ता है जिसे भारतीय समाज भी हेय दृष्टि से देखता है।

3. कटु दाम्पत्य जीवन : कटु दाम्पत्य जीवन का सर्वाधिक श्रेय घरेलू हिंसा को जाता है। पुरुष व नारी के बीच दाम्पत्य जीवन तभी सुखी या खुशियों से भरा रह सकता है जब स्त्री पुरुष दोनों ही एक दूसरे की भावनाओं को समझें व एक दूसरे के विचारों की इज्जत करें। लेकिन भारतीय समाज की विडम्बना है कि प्राचीन काल से ही नारी पुरुषों की प्रताड़ना का शिकार बनती चली आ रही है। नारी प्रताड़ना का सबसे खतरनाक रूप घरेलू हिंसा है। घरेलू हिंसा की वजह से परिवार में प्रतिदिन कलह का वातावरण बना रहता है जिसकी परिणती यह होती है कि संपूर्ण दाम्पत्य जीवन खुशियों की जगह दुःखों से भर जाता है।

4. बच्चों के अधूरे व्यक्तित्व का विकास : भारत में वैसे भी यह कहा जाता है कि यदि बागीचा अच्छा है तो निश्चित ही उसमें सुंदर फूल खिलेंगे। भारतीय समाज में नारी के प्रति पुरुषों द्वारा की जा रही घरेलू हिंसा का असर तो संपूर्ण परिवार, समाज, देश पर पड़ता ही है किंतु घरेलू हिंसा का सर्वाधिक प्रतिसाद परिवार में रहने वाले बच्चों के व्यक्तित्व के विकास पर पड़ता है। अनेक ऐसे बच्चे हैं जो माता पिता के बीच होने वाली घरेलू हिंसा की वजह से उनके कोमल हृदय पर इतना आघात पहुंचता है कि वे अपने पिता से घृणा करने लगते हैं व अपने आप ही उनमें मानसिक विकृतियां उत्पन्न हो जाती है।

5. महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन : घरेलू हिंसा मानवाधिकारों का हनन भी करती हैं। महिलाओं की स्वतंत्रता, समानता व गरिमा का पूर्णतया शोषण होता है भले ही सैद्धांतिक तौर पर महिलाएं स्वतंत्र व समान हो किंतु उनके प्रति होने वाली घरेलू हिंसा इस बात की परिचायक है कि व्यावहारिक तौर पर वे मानवाधिकारों का उपभोग नहीं कर रही हैं। घरेलू हिंसा के कारण महिलाओं के मानवाधिकारों का भी हनन किया जाता है इन अधिकारों के हनन में महिलाओं की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति ना करने, स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही करना, स्वच्छ आवास, वस्त्र, स्वास्थ्यप्रद भोजन ना कराना जो कि महिलाओं के मानवाधिकारों का हनन पूर्ण रूप से घरेलू हिंसा में देखने को मिलता है।

6. स्त्री पुरुष अनुपात में असंतुलन : घरेलू हिंसा के परिणाम स्वरूप महिलाओं की जनसंख्या निरंतर घट रही है। इस पुरुष प्रधान समाज में पित्र सत्तात्मक पद्धति में पुत्र होना अनिवार्य माना जाता है व पुत्री को आज भी हेय दृष्टि से देखा जाता है जिस कारण कन्या भ्रूण हत्या का चलन जोरों पर है। कन्या को आधुनिक साधनों के परीक्षण के द्वारा दुनिया में आने से पहले ही समाप्त कर दिया जाता है जिस कारण महिलाओं की संख्या का अनुपात दिनों-दिन असंतुलित होता जा रहा है।

घरेलू हिंसा के विरुद्ध पुलिस

महिलाओं के विरुद्ध हो रहे अत्याचारों को रोकने में पुलिस की भूमिका काफी महत्वपूर्ण साबित हो रही है विशेषतः महिलाओं के पुलिस में आ जाने से महिला अपने प्रति हो रहे प्रत्येक तरह की घरेलू हिंसा को उनके समक्ष खुल कर बयान कर सकती है पुलिस को विशेषतः महिलाओं पर होने वाले घरेलू हिंसा के प्रति सकारात्मक रुख अपनाना चाहिए। जिससे समाज में पनप रहे इस अपराध को जड़ मूल से नष्ट किया जा सके।

किसी भी समाज में रहने वाले लोगों की आंतरिक व्यवस्था की जिम्मेदारी पुलिस पर रहती है। पुलिस को चाहिए कि जहां कहीं भी घरेलू हिंसा की शिकायत आती है उसकी शीघ्र रिपोर्ट लिखकर तुरंत पीड़ित को कानूनी सहायता मुहैया कराए। आजादी के बाद हमारे पुलिस प्रशासन पर और अधिक सक्रीय होकर कानून व्यवस्था को चुस्त दुरुस्त कर लागू करने की जिम्मेदारी आ गई है जिससे की समाज में हो रही घरेलू हिंसा की प्रवृत्ति को कम किया जा सके।

पुलिस को न तो जनता का दोस्त बनकर कार्य करना चाहिए न ही नकारात्मक सोच रखकर कार्य करना चाहिए पुलिस को जनता पर नियंत्रण का तरीका स्नेहपूर्ण एवं मददगार होना चाहिए। जनता का विश्वास पुलिस पर इतना होना चाहिए कि जनता कानून का निर्वाह करने में पुलिस का सहयोग करे तथा स्वयं अनुशासन में रहे।

पुलिस के बिना सुंदर समाज की कल्पना मात्र कल्पना रह जाती है। भारत की पुलिस अपने दायित्वों का निर्वाह बेहतर ढंग से कर रही है लेकिन परिस्थिति व पीड़ितों के प्रति उसे और अधिक सहयोगात्मक तरीका अपनाना होगा तभी भारतीय समाज से अपराधों में कमी की जा सकेगी।

संदर्भ

1. श्रीवास्तव दीप्ती , 2005, महिलाओं के प्रति अपराध, म.प्र. भोपाल
2. घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005, भारत सरकार
3. चौबे अरविंद कुमार, 2005, रिसर्च स्कालर (डी.डी.यू.गो.वि.वि. गोरखपुर) यू.पी.
4. डा. राज सिंह ओम, शहरी परिप्रेक्ष्य में महिला पुलिस की भूमिका, संस्कृति नई दिल्ली
5. कु. राठी सीमा, शोध छात्रा राजनीति विभाग एम.एम. कॉलेज मोदी नगर
6. डा. पर्चारी प्रीती, छत्रसाल शा.स्ना.महा. पन्ना म.प्र.
7. सेंटर फॉर वुमन्स डेवलपमेंट (एस.डब्ल्यू.डी.)
8. विश्व स्वास्थ्य संगठन
9. राष्ट्रीय महिला आयोग, नई दिल्ली
10. सी-वोटर (मीडिया)

❐

महिला पुलिस

डा. ओमराज सिंह

निपसिड, हौजखास, नई दिल्ली-110016

संसार के विभिन्न देशों में महिला पुलिस की स्थापना के इतिहास से पुलिस कार्य में महिलाओं के नियोजन में पर्याप्त भिन्नता दिखाई देती है जिससे आर्थिक प्रगति तथा सोच का बोध होता है। पुलिस में प्रवेश पाने के लिए संसार भर की महिलाओं को कड़ा एवं लंबा संघर्ष करना पड़ा है। पुलिस बल महिलाओं को शामिल करने के लिए तैयार नहीं थे क्योंकि वे उन्हें अपने साथ सत्ता में भागीदार नहीं बनाना चाहते थे आमतौर पर ज्यादातर विभागों ने महिलाओं के अस्थायी नियोजन पर रखकर परीक्षण किए। महिलाओं और बच्चों से संबंधित महत्वपूर्ण मामलों को हल करने में उनके महत्व को आंका गया तथा उनको पहचान मिली। संयुक्त राज्य अमेरिका कानून लागू करने में महिलाओं के उपयोग के क्षेत्र में अग्रणी रहा। हम कह सकते हैं कि पहले-पहल महिलाओं को सन 1845 में, अमेरिका के न्यूयार्क शहर में पुलिस मैटर्न के रूप में नियुक्त किया गया। उन्हें पुलिसोन्मुखी कार्यों के स्थान पर अभिरक्षात्मक कार्य ही सौंपे गए। सबसे पहले सन 1893 में शिकागो शहर में पुलिस में महिला की नियुक्ति के दस्तावेज मिलते हैं। उन्हें न्यायालय में जाने और ऐसे मामलों में जहां महिला और बच्चे शामिल थे वहां पुरुष जासूसों की सहायता के कार्य सौंपे गए। जिन महिलाओं को पुलिस विभाग में लिया गया उन्होंने पुलिस अधिकारियों की बजाय सामाजिक कार्यकर्ताओं के रूप में ही कार्य किया। प्रथम विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप महिलाओं को पुलिस कार्य की क्षमताएं दिखाने का मौका प्राप्त हुआ। सन 1920 तक 200 महिलाओं की अमेरिका शहर में पुलिस संगठन में भर्ती हो चुकी थी। सन 1972 में जब समान रोजगार अवसर अधिनियम पारित किया गया तो सभी कानूनी भेदभावों को समाप्त कर दिया गया था।

भारत में महिला पुलिस

भारत में पुलिस कार्यों के लिए विभिन्न महिलाओं की जासूसी के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका का उल्लेख ई. पू. 310 में लिखे गए कौटिल्य अर्थशास्त्र में मिलता है। शर्मा (1977), बाशम (1965) में उन सशस्त्र महिलाओं का वर्णन किया है जो प्राचीन भारत में हरमों की सुरक्षा का कार्य किया करती थीं। उसमें मौर्य राजाओं का भी उल्लेख किया है जिनकी सुरक्षा का कार्य तलवार तथा तीर कमान के संचालन में प्रशिक्षित वीरांगनाओं द्वारा किया जाता था। ग्रीक लोग पंजाब की कुछ जातीय महिलाओं की भीषण बहादुरी से प्रभावित थे जिसका प्रदर्शन उनके द्वारा अपने पुरुष साथियों के साथ मिलकर सिकंदर का प्रतिरोध करने के लिए किया गया था। इसके बावजूद एक चौथाई, बीसवीं शताब्दी गुजरने के बाद ही पूर्व महिलाओं को पुलिस संगठन में शामिल करने का रिकार्ड अर्थात सबूत उपलब्ध होते हैं। कानपुर में सन 1938 में श्रमिकों की हड़ताल के होते हुए पहली बार महिला पुलिस की जरूरत को महसूस किया गया। (उत्तरप्रदेश सरकार 1962)। उस समय महिला श्रमिक हड़ताल विरोधी मजदूरों के प्रवेश को रोकने के लिए कारखाने के प्रवेश द्वार पर बैठ गई थी तथा पुरुष पुलिसकर्मियों को महिला श्रमिकों को पकड़-पकड़कर हटाने की संवेदनशील स्थिति का सामना करना पड़ा था। ऐसी किसी प्रकार की स्थिति से भविष्य में निपटने के लिए भारत में सन 1939 में पहली बार कानपुर में महिला पुलिसकर्मियों की नियुक्ति की गई थी। लेकिन जैसे ही हड़ताल समाप्त हुई, आनन-फानन में गठित किए गए महिला पुलिस बल का विघटन कर दिया गया। उसी साल त्रावणकोर रियासत में भी एक महिला हैड कांस्टेबल तथा 12 विशेष महिला पुलिस कांस्टेबलों की

नियुक्ति की गई। उनको नियमित पुलिस बल में अस्थायी पुलिस कांस्टेबलों के रूप में नियुक्त किया गया। देश में आजादी के बाद भी विभिन्न राज्यों में पुलिसबलों में महिलाओं की नियुक्ति नियमित आधार पर की गई।

महिला पुलिस की कल्याणकारी भूमिका

विश्व मे विभिन्न समाजों में आ रहे परिवर्तनों के साथ-साथ पुलिस व्यवस्था की भूमिकाएं और लक्ष्य भी बदल रहे हैं। पुलिस की भूमिका केवल कानून को लागू करने के कार्य तक सीमित न रहकर बहुआयामी हो गई है। जब हम यौन हिंसा को देखते हैं तो पाते हैं कि यह कोई नई नहीं है फिर भी हाल के वर्षों में इसकी उत्तरोत्तर सामाजिक समस्या के रूप में पहचान की जाती है। बलात्कार, सती, बालिका, हत्या, बालिका भ्रूण की हत्या, दहेज मृत्यु, पत्नी की पिटाई, भावनात्मक, अत्याचार आदि के रूप में महिलाओं के उत्पीड़न को देखा जा सकता है। महिलाओं के विरुद्ध अपराध की स्थितियों का विश्लेषण करने से यह प्रकट होता है कि बड़ी संख्या में महिलाएं अपराध का शिकार बनती हैं। महिलाओं की सुरक्षा हेतु अनेक कानूनी व्यवस्थाओं तथा सामाजिक कार्यक्रमों के बावजूद महिलाएं न केवल कानून तोड़ने वालों बल्कि कानून की रक्षा करने वाले तथाकथित पुलिसकर्मियों से भी असुरक्षित रहती है। अनेक बार पुलिस कर्मियों द्वारा संयुक्त रूप से बलात्कार करने की खबरें अखबारों की सुर्खियों बनती रहती हैं।

साथ ही भारतीय समाज के परंपरागत मानक किसी व्यक्ति द्वारा की गई हिंसा के कार्य की पीड़ित महिला अथवा उसके माता-पिता द्वारा खुली निंदा में अवरोधक होते हैं। ऐसी परिस्थितियों में परिवार के सदस्य के विरुद्ध मामला दर्ज करने के लिए हिंसा से पीड़ित द्वारा हिचकिचाहट से यह कार्य और भी अधिक मुश्किल हो जाता है। इसलिए पुरुष उस अकेलेपन का जिसमें महिलाओं को धकेल दिया जाता है का लाभ उठाते हैं। इसी स्थिति के कारण महिलाओं के विरुद्ध हमारे देश में पुलिस के लिए एक अजीबो-गरीब समस्या बन जाती है। जिसका पुलिस के द्वारा निदान करना मुश्किल हो जाता है।

महिला पुलिस की पुलिस स्टेशन में मौजूदगी से पुलिस पर जनता का भरोसा तथा विश्वास पैदा करने में मदद मिलेगी, महिला पुलिस, पुलिस कार्य के सेवा पहलु की तरफ अधिक ध्यान दिए जाने में सहायता कर सकती है। पुलिस की संपूर्ण दार्शनिकता संस्कृति और तौर तरीका ऐसा होना चाहिए जिससे पुलिस थाने ऐसे दिखाई दें और वहां कार्य भी हो और मुसीबत में पड़े व्यक्ति के लिए सहायता के तत्काल स्रोत साबित हों। पुलिस स्टेशन में महिला पुलिस की तैनाती से इस लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है अर्थात आज के दौर में मदद भी मिल रही है आम जनता को।

यौन उत्पीड़न की शिकार महिलाओं के बयान, उनसे पुछताछ और कार्रवाई पुरुष अधिकारियों के द्वारा न करके, महिला पुलिस के द्वारा ही की जानी चाहिए। महिला कैदियों की तलाशी अथवा पुलिस हिरासत में बंद महिला कैदियों की पहरेदारी अथवा भागी हुई महिलाओं अथवा लड़कियों के मामले में कार्रवाई अथवा किशोर अपचारिता के संबंध में कार्रवाई का कार्य पुरुष अधिकारियों को करने की अनुमति होनी चाहिए।

- ❖ समाज को महिला पुलिस से बहुत सी उम्मीदें हैं। महिलाओं तथा बच्चों से संबंधित समस्याओं को महिला पुलिस अच्छी प्रकार से निपटा सकती है तथा जनता में पुलिस की छवि में सुधार लाने में कामयाब हो सकती हैं।
- ❖ महिला पुलिस निष्पक्ष होकर समस्याओं का निपटारा सही प्रकार से कर सकती है।
- ❖ महिला पुलिस निष्ठुरता की चरम सीमा पर नहीं पहुंच सकती। अपराधी के साथ विशेषकर महिलाएं एवं बच्चों के साथ मानवतापूर्ण व्यवहार करेंगी।

- ❖ महिला पुलिस, राजनेताओं के हस्तक्षेप के बावजूद गलत कार्य में सहयोग नहीं करेगी। उसको जनता का सच्चा हमदर्द समझा गया है।
- ❖ महिला पुलिस भ्रष्टाचार से दूर रहेगी तथा धार्मिक होने के कारण रिश्वत नहीं लेगी। जनता तथा पुलिस के बीच बहुत सी गलतफहमियां हैं। इनको दूर करने में महिला पुलिस सहयोग कर सकती है। मेल-जोल का वातावरण होगा तथा आम जनता की विचारधारा में परिवर्तन आएगा।
- ❖ महिला पुलिस की उपस्थिति के कारण अभद्र भाषा का प्रयोग नियंत्रित होगा तथा पुलिसकर्मी गाली-गलौच की भाषा का कम प्रयोग करेंगे। इससे दोषी महिला तथा बच्चों के अंदर भय कम होगा तथा अत्याचार नहीं हो पाएगा। महिला पुलिस महिलाओं से संबंधित कानूनों को अधिक गंभीरता एवं प्रभावशाली ढंग से लागू कर सकती है।
- ❖ महिला पुलिस के अच्छे प्रदर्शन के कारण उच्च तथा मध्यवर्ग की शिक्षित लड़कियों को पुलिस में आने का प्रोत्साहन मिलेगा जिसके कारण पुलिस बल की भविष्य में साफ-सुथरी छवि समाज के समक्ष प्रस्तुत होगी। देश में पुलिस की छवि बेहतर होगी। जनता पुलिस को सहयोग के रूप में मददगार समझेगी तथा दोनों के बीच वैमनस्य का वातावरण समाप्त हो जाएगा।
- ❖ भारतीय समाज की संरचना इस प्रकार की है कि महिला अपराधियों के पुनर्वास की समस्या अत्यंत ही जटिल है। जेल से सजा काटकर आने वाली महिला को परिवार व समाज द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है। ऐसे में वह पुनः अपराध में लिप्त होना चाहती है। महिला पुलिस इस प्रकार की महिलाओं को सीधा व सरल रास्ता दिखाकर सुधार सकती है। तथा सलाह व मश्वरा देकर पुनः अपराध में शामिल न हो, के लिए बाध्य कर सकती है तथा समय-समय पर उनसे बातचीत करते रहना उनके जीवन में उत्साहवर्धक साबित होगा।
- ❖ भारतीय जेलों में मां के साथ तीन साल तक के बच्चे को भी रखने का प्रावधान है। परंतु बच्चों के लिए खिलौने, शिक्षा नर्सरी आदि का कोई इंतजाम नहीं होता है। जेल के प्रदूषित वातावरण में बच्चे को मिले संस्कार उसे अपराधी बनने से नहीं रोक पाते हैं। अपराधों की रोकथाम लिए बच्चों की यथोचित व्यवस्था पुलिस को करनी चाहिए। इस कार्य को महिला पुलिस अच्छे एवं सुचारू रूप से संचालित कर सकती है। बच्चों के साथ महिला पुलिस घुल मिलकार मां का भी दिल जीत सकती है। समाज में अपराधों में कमी लाने में महिला पुलिस योगदान कर सकती है।
- ❖ न्याय की विपरित प्रणाली जिसका अर्थ है कि बलात्कार की शिकार महिला से कटघरे में प्रति-परीक्षा करने से उसे पीड़ा और महान दुःख से गुजरना पड़ता है और उन्हें अपराध (घटना) का ब्यौरा बताना पड़ता है। ऐसी छानबीनों के लिए महिला पुलिस का प्रयोग करने से पीड़ित महिला अपेक्षाकृत कम दबाव में रहती है तथा अपने को सुरक्षित महसूस करती है।

महात्मा गांधी के विचार पुलिस के संबंध में इस प्रकार से हैं कि - पुलिस के बारे में उनकी जो अवधारणा है वह वर्तमान पुलिस बल से नितांत भिन्न हैं। वे लोगों के स्वामी नहीं बल्कि सेवक होंगे। जनता उन्हें स्व-प्रेरणा से प्रत्येक संभव सहायता देगी और पारस्परिक सहयोग से वे लगातार कम होते हुए दंगे फसादों पर काबू पा सकेंगे। उन्हें केवल चोरों और डकैतों के साथ ही पुलिसगिरी करने की जरूरत पड़ेगी। जहां तक पुलिस के कार्य का संबंध है वे केवल भारतीय है जो धर्म की ओर ध्यान दिए बिना दुखियों को पूरा-पूरा संरक्षण प्रदान करने की शपथ से बंधे हुए हैं। अपना कर्तव्य पालन करने से वे कम

मुसलमान, हिंदू व सिक्ख नहीं हो जाएंगे बल्कि मुसलमान हिंदू या सिक्ख होंगे।

❖ महिला पुलिस की विभिन्न परिस्थितियों को शांतिपूर्वक हल करने तथा तनाव को दूर करने की बहुत संभावनाएं होती है। बिना संघर्ष की भूमिकाओं जिनमें नियंत्रण, धैर्य और सहनशीलता की जरूरत हो उन्हें वहां सरलता से तैनात किया जा सकता है। विशेष रूप से उनकी आवश्यकता ऐसे मामलों में पड़ती है जहां पुलिस का संपर्क महिलाओं से होता है ताकि महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार की शिकायतों को रोका जा सके। पुलिस स्टेशनों में पुलिस महिला की उपस्थिति से पुलिस कार्य के सेवा पहलुओं की ओर बेहतर ध्यान देने में काफी अधिक मदद मिलेगी।

- महिला पुलिस एक सामाजिक बदलाव की एक कड़ी हो सकती है।
- महिला पुलिस के अनैतिक व्यापार तथा बच्चों के विरुद्ध लैंगिक अपराधों से संबंधित मामलों की कार्रवाई तथा छानबीन के कार्य को सुचारू रूप से करते हुए परखा जा चुका है तथा उनको इस प्रकार के कार्यों के योग्य समझा जाने लगा है।
- महिला पुलिस के द्वारा स्कूलों के बच्चों को समझाकर अर्थात भाषण देकर अपराध, सड़क सुरक्षा आदि में कमी लाई जा सकती है तथा एक बेहतर समाज का निर्माण किया जा सकता है।

संदर्भ

डा. ओमराज सिंह - शहरी परिपेक्ष्य में महिला पुलिस की भूमिका, अरावली इंटरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

डा. ओमराज सिंह - पुलिस, अपराधी तथा दलित अरावली इंटरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

डा. ओमराज सिंह - सामाजिक परिपेक्ष्य में महिलाएं अरावली इंटरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

❐

अपराध विश्लेषण में रक्त वर्गीकरण एवं डी.एन.ए. की उपयोगिता

डा. साहिब सिंह चांदना

वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी
81, ग्रीन पार्क, हिसार - 125001 हरियाणा

प्रकृति ने हमारी शारीरिक रचना लगभग 3 खरब सूक्ष्य कोशिकाओं को ईटों की तरह पारस्परिक रूप से जोड़कर तैयार की है। प्रायः ये कोशिकाएं इतनी सूक्ष्म है कि इनको नग्न आंखों से नहीं देखा जा सकता। इन कोशिकाओं में एक केंद्रक अर्थात न्यूक्लिस होता है। केंद्रक में बहुत बारीक धागों जैसे 23 जोड़े क्रोमोसोम अर्थात गुणसूत्र पारस्परिक रूप से सटे हुए मिलते हैं। प्रत्येक जोड़े का एक गुणसूत्र माता से और अन्य गुणसूत्र पिता से मेल खाता है। आश्चर्य यह है कि प्रत्येक क्रोमोसोम में कुण्डली के रूप में डी.एन.ए. रूपी धागे पाए जाते हैं। वास्तव में डी.एन.ए.एक रसायन है जिसका निर्माण 4 क्षारों के संयोग से ही संभव है एडीनीन (ए), थायमीन (टी), सायटोसीन (सी), और ग्वानीन (जी)। डी.एन.ए. की कुण्डली पर्याप्त लम्बाई वाली होती है जिस पर ये चारों विभिन्न क्रमों में जुड़े रहते हैं। विशेष क्रम ही इनकी कुटिल परिभाषा है जिसके आधार पर किसी विशेष प्रोटीन की संरचना होती है। अभिप्राय यह है कि हमारे शरीर में उपलब्ध सहस्त्रों प्रोटीन ही हमारी जीवन रूपी गाड़ी को चला रहे हैं। प्रोटीन निर्माण का निर्देश देने वाली प्रत्येक श्रृंखला 'जीन' कहलाती है और समस्त जीनों के समूह अर्थात झुण्ड को 'जीनोम' की संज्ञा दी गई है। ऐसा माना जा रहा है कि प्रत्येक मानवीय कोशिका में तीन अरब से भी अधिक क्षार ए.टी.सी. और जी अक्षरों के रूप में उपलब्ध हैं जिनसे लगभग 30,000 जीन निर्मित होती हैं। वस्तुतः आजकल इन अक्षर रूपी खरबों क्षारों को पुर्नस्थापित करके सहस्त्र जीनों की संरचना की जानकारी मिल चुकी है।

सूक्ष्म जीवाणुओं की अपेक्षा मानव जीनों की संख्या केवल पांच गुणा अधिक है। मानव जीनों की उपरोक्त संख्या फल—मक्खी (ड्रोसोफिला) से मात्र केवल ग्यारह हजार अधिक, वृमि कीट से दोगुनी और चूहे के बराबर ही है।

विडम्बना है कि इतने कम जीनों से हमारे शरीर की अति जटिल कार्यप्रणाली कैसे सुचारू रूप से क्रियान्वित है। अतएव अधिकांश जैव रसायन वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि हमारे शरीर की जटिलता का रहस्य कहीं और छुपा है, जिसे वे शीघ्रातिशीघ्र ढूंढ निकालने में सक्ष्म होंगे।

विशेषज्ञों की राय में मानव जीन अन्य जीवों की अपेक्षा कहीं अधिक क्षमता रखती है। साधारण जीवों की एक जीन केवल मात्र एक प्रोटीन संरचना के लिए निर्देश देती है जबकि मानव शरीर की जीनों में विभिन्न प्रोटीन के निर्माण की दक्षता और क्षमता है। इसके अतिरिक्त मानव शरीर के प्रोटीन भी अन्य जीवों के प्रोटीन से कहीं बेहतर और गुणवान हैं। मानव शरीर में पाए जाने वाले प्रोटीन कठिन से कठिन कार्यों को भी सुलभ रूप से क्रियान्वित करने में अति सक्षम हैं। फलस्वरूप जीन की अल्पसंख्या होने के विपरीत भी मानवीय शरीर के सभी अंग सुचारु रूप से कार्य करने की क्षमता रखते हैं।

आने वाले समय में वर-वधू को प्रणय सूत्र में बांधने से पूर्ववत उनके अभिभावक जन्मकुण्डली की अपेक्षा वंशाणु कुण्डली को अधिक महत्व देंगे। वैज्ञानिक भी अब ज्योतिषियों के व्यवसाय को चुनौती देने में सक्षम हो गए हैं। तरुणा और तरुणी का मंगल कार्य तभी संपन्न

हो सकेगा जब उनकी जीन कुण्डली अथवा वंशाणु कुण्डली के रहस्य और गुण मिलते-जुलते होंगे। शोधकर्ताओं के कथनानुसार यदि विवाह से पहले वर-वधू के रक्त की जांच करवा ली जाए तो बच्चों को संस्कार व विरासत रूप में मिलने वाली अधिकांश बीमारियों के गहन रहस्य का पता चल सकेगा और उनको बीमारियों से छुटकारा भी दिलवाया जा सकेगा। यदि संतान में रक्तचाप, गठिया, दमा इत्यादि भयावह रोग हैं तो संभावना हो सकती है कि इस बीमारी के उत्तरदायी केवल उनके मां-बाप हों और वंशाणुगत परंपरा के आधार पर ही ये बीमारियां पूर्ववत पनपी हों। वास्तविकता तो यह है कि मानवीय कोशिकाओं के अंदर पाए जाने वाले वंशाणुओं से ही ये विरासत के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती जा रही है।

'मानव जीनोम परियोजना' ने ऐसी कई संभावनाओं के विकल्प खोल दिए हैं। मानव जीनोम को ही जीवन की पुस्तक अथवा जीव रसायन जन्त्री माना जा रहा है। इस पुस्तक की भाषा जैव रसायन है। इस जन्त्री अथवा पुस्तक का पूर्णरूपेण संपादन और विवेचन होता है। जिस प्रकार से पुस्तक अथवा समाचार पत्र में यदि प्रूफ रीडिंग सही ढंग से न की जाए तो वह अर्थविहीन हो सकती है अथवा अर्थ कुछ का कुछ निकल सकता है। ठीक उसी प्रकार की अवस्था जीव रसायन जन्त्री की है। यदि अमिनो एसिड क्रमबद्ध ढंग से न जुड़े हों तो उनकी मूल संरचना में परिवर्तन आ जाता है और एच्छिक प्रोटीन की उत्पति नहीं होगी। क्योंकि एच्छिक प्रोटीन ही जीवनयापन के लिए अति महत्वपूर्ण है। फलस्वरूप कोई न कोई बीमारी संतान को घेर लेगी। वस्तुतः आधुनिक युग में मानव जीनोम की संरचना की दौड़ में जीव रसायन वैज्ञानिकों ने मानव जीनोम परियोजना के अंतर्गत सबसे महत्वपूर्ण गुणसूत्रों की सर्वव्यापी शृंखला (क्रोमोसोमल सीक्वेंस) तैयार करने में आशातीत सफलता पाई है और जैव रसायन विज्ञान की एक विशिष्ट उपलब्धि है जिसके आधार पर भविष्य में घटित होने वाली स्वास्थ्य संबंधित घटनाओं का पूर्ववत अनुमान लगाया जा सकता है। इस गुणसूत्रीय शृंखला के आधार पर लगभग 300 बीमारियों के निदान में अभूतपूर्व सफलता मिल सकेगी। कैंसर पाकिन्सन इत्यादि बीमारियां तो पारिवारिक अनुवांशिकी इतिहास व इलाज के आधार पर शीघ्र ही नियंत्रित हो जाएंगी। उदाहरणार्थ यदि थैलेसीमिया बीमारी के साधारण लक्षण दोनों मां-बाप में हो तो उनकी संतति में भी उपरोक्त बीमारी के लक्षण पनपने लगते हैं।

यौन संपर्क से हेपेटाइटिस फैलने की आशंका बनी रहती है, जिसकी पूर्ण रोकथाम के लिए विवाह से पूर्व जांच प्रक्रिया ही एक यथोचित व सराहनीय कड़ी होगी। इसके अतिरिक्त आर.एच. परीक्षण में भी यदि मां और बाप के गुण यदि पारस्परिक रूप से भिन्न पाए जाते हैं तो बच्चों में पनपे हुए रोगों के कारण दुर्दशा देखी नहीं जा सकती है। अतएव जीन जन्त्री अथवा स्वास्थ्य कुण्डली का आधार व्यापाक स्तर पर जीन कुण्डली ही होगी। आधुनिक युग में दवाई विक्रय की इस होड़ में कुछेक प्रतिष्ठित दवा कंपनियों ने सर्वव्यापी विवेचना के लिए स्वास्थ्य कुण्डलियों का भी वितरण करने लगी हैं। वास्तव में यह व्यापक स्तर का एक डायग्नोस्टिककिट अथवा पैकेज है। उपरोक्त किट में आर. एच. परीक्षा, हेपेटाइटिस, बी परीक्षण, थैलेसीमिया, एच.आई.वी. संक्रमण परीक्षण, सिफलिस परीक्षण इत्यादि उपलब्ध हैं। अतएव विवाह से पूर्ववत प्रत्येक विवाह सूत्र में बंधने वाले प्राणी को एच.आई.वी. व सिफलिस की पूर्णरूपेण जांच करा लेनी चाहिए। यह सार्वभौमिक सत्य है कि भारतवर्ष में गत वर्ष 2005-2006 में एड्स से 4,00000 से भी अधिक व्यक्ति जान गंवा चुके हैं। सरकारी आंकड़े कुछ और बोलते हों, परंतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस

तथ्य की पुष्टि हो चुकी है। एड्स रोग के अधिकांश मामले निर्धनता के कारण, अच्छे चिकित्सक से इलाज और परामर्श से भी अछूते रहते हैं नीम-हकीम और तांत्रिक, धर्मानुष्ठानों की क्रियाओं में उलझे रहते हैं। अतएव उनकी गणना ठीक प्रकार से नहीं हो पाती। पूना से बंगलौर के मध्य रहने वाले लोगों में एड्स के प्रति अत्यन्त संवेदना और जागरूकता दीखने लगी है। अतएव यौन रिश्तों से फैलने वाली इन बिमारियों की गहरी छान–बीन होने लगी है। इक्कीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में ग्रहों को आधार मानकर ज्योतिषी जन्म कुण्डली की नई रूप रेखा विकसित करेंगे तो जैव रसायन वैज्ञानिक भी जीन अथवा वंशाणुओं को बीमारियों का तर्क संगत आधार मानकर पूर्व लेखा-जोखा सहित 'जीन जन्त्री' का निर्माण करेंगे। इन दोनों प्रकार की जंत्रियों में वर्चस्व प्रतिस्पर्धा देखने को मिलेगी।

डी.एन.ए. परीक्षण विभिन्न प्रकार के जघन्य अपराधों-बलात्कार, कत्ल, पैतृकता विवादों की परतों को खोलने इत्यादि के लिए मील का पत्थर प्रमाणित हो चुका है। अन्तत्वोगत्वा डी.एन.ए. परीक्षण से सत्यता की पुष्टि होती है। अक्षरश रक्त व अन्य जैविकी उत्तकों से डी.एन.ए. को प्राप्त करके पूर्णरूपेण जीन शृंखला विकसित की जाती है। अन्य समृद्ध राष्ट्रों में प्रकिण्व प्रक्रिया और वंशानुगत प्रणाली और अनुवांशिकी चिन्हों के वर्चस्व को डी.एन.ए. परीक्षण ने पछाड़ दिया है क्योंकि एन्जायम और रक्त वर्ग अति शीघ्र ही क्षय हो जाता है क्योंकि दीर्घकालीन प्रक्रिया व वातावरणीय प्रभावों से उपरोक्त क्रियाएं सही दिशा निर्धारित करने में सक्षम नहीं है। मृतक व्यक्ति की पहचान के लिए उससे संबंध रखने वाले व्यक्ति के 2.5 मि.ली. रक्त की आवश्यकता पड़ती है जो उनके माता, पिता, पत्नी व बच्चों से प्राप्त करके उनको स्वच्छ आन्तचनरोधी शीशियों में बंद करके थर्मोस इत्यादित में बर्फ के टुकड़ों से ढक कर प्रयोगशाला में भेजने का प्रावधान है। इसी प्रकार बलात्कार के मामलों की पुष्टि के लिए संदेही व्यक्ति का 2.5 मि.मी. रक्त भेजना चाहिए। इसके अतिरिक्त दांत, अस्थि, बाल, रक्त के धब्बे, शुष्क त्वचा को शुष्क कागज अथवा स्वच्छ कागज पर रखकर परखा जा सकता है। यदि डी.एन.ए. का नमूना संदिग्ध व्यक्ति से मेल खाता है तो भी दो विकल्प उभरते हैं। प्रथम यह है कि नमूना संदिग्ध व्यक्ति का भी हो सकता है। दूसरे विकल्प में यह नमूना व्यक्ति विशेष से मेल न खाता हो, और नमूने का मेल संयोगवश हो क्योंकि उसी प्रकार की जनसंख्या में दो व्यक्तियों की एक ही प्रकार की डी.एन.ए. श्रृंखला हो सकती है। अतएव इस प्रकार के मामलों में डी.एन.ए. श्रृंखला की विभिन्न आकृतियों की पूर्णरूपेण छान-बीन होनी चाहिए। इसकी पुष्टि के लिए डी.एन.ए. परीक्षण प्रयोगशालाओं में विभिन्न प्रकार की जनसंख्या के तरह-तरह के नमूनों की डी.एन.ए. श्रृंखला को मापदंड निर्धारित करने के लिए एक अनूठा कार्यक्रम पहले से ही तैयार होना चाहिए ताकि गलत परिणाम आने का कोई विकल्प ही न बचे। विधि विज्ञान प्रयोगशाला मधुबन (हरियाणा) ने केंद्रीय जैविकी प्रौद्योगिकी की अनुकम्पा से प्रारंभिक दौर में लगभग 6 डी.एन.ए. मार्कर खंगाले और अब भी 13-16 जीन मार्कर को खंगालने के लिए सतत प्रयास जारी है।

अनुवांशिकी परंपरा के अनुसार मां अथवा पिता से रक्त के एक ग्रुप का संतान में पाया जाना अनिवार्य माना जाता रहा है, परंतु सफलीभूत प्रक्रिया के लिए रहस्य की पुष्टि के लिए नव डी.एन.ए. की तकनीक से विश्लेषण व विच्छेदन भी करना पड़ता है ताकि न्यायालय में तर्कसंगत प्रमाण प्रस्तुत किए जा सकें ताकि उत्पीड़ित व्यक्ति को अभीष्ट फल की प्राप्ति हो।

घटनास्थल पर मिलने वाले साक्ष्यों या मृतक द्वारा पहनी गई घड़ी, अंगूठी, हार इत्यादि से भी डी.एन.ए. के

नमूने उपलब्ध हो सकते हैं। पहने गए गहनों से शरीर का संबंध होने से और पारस्परिक घर्षण से उत्तक इत्यादि की उपरी परतें त्वचा के साथ सटी होने के कारण घड़ी या गहनों में फंस जाती है और विशेषज्ञ इन उत्तकों को निकालकर डी.एन.ए. के नमूने की लड़ी तैयार कर लेते हैं। बालों की रूसी, मवाद इत्यादि से भी डी.एन.ए. के नमूनों की निकासी संभव है।

सूक्ष्म डी.एन.ए. को लड़ी की वृद्धि हेतु इसको विस्तृत किया जा सकता है। इस तकनीक को पी.सी.आर. के नाम से संबोधित किया जाता है। निःसंदेह पी.सी.आर. एक तरह की आण्विक जिरोक्स जैसी होती है जिसमें सभी अनुवांशिकी तत्व प्रचुर मात्रा में मिलते हैं और जिरोक्स किए गए दस्तावेज की तरह कम से कम भिन्नताएं प्रदर्शित होती है। उपरोक्त पी.सी.आर. तकनीक मुलिस नामक वैज्ञानिक ने वर्ष 1986 में विकसित की। पी.सी.आर. तकनीक से पूर्ववत प्रकिण्व की प्राप्ति हेतु एक जीवाणु थर्मस अक्वैटीकस को स्रोत का माध्यम बनाया जा चुका है। पी.सी.आर. तकनीक में मुख्यतः डी.एन.ए. को विच्छेद किया जाता है तथा डी.एन.ए. को द्विगुणन करके समानांतर वृद्धि की जाती है। इस तकनीक से दोषी और उत्पीड़ित व्यक्ति के डी.एन.ए. की लड़ी का पारस्परिक मिलान करके समानता या भिन्नता परखी जाती है। रिबन की तरह सिमटे हुए डी.एन.ए. के अवयवों से स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाता है कि डी.एन.ए. के मिलान में समानता व भिन्नता नवदिशा निर्धारण करती है जिससे संदिग्ध व्यक्ति को पहचाना जा सकता है।

डी.एन.ए. की उपयोगिता

1. रक्त रंजित साक्ष्यों व बलात्कार की पुष्टि हेतु डी.एन.ए. की कापियां तैयार करवाई जा सकती है।
2. दुर्घटना अथवा मानव वध इत्यादि में घटनास्थल पर शारीरिक नमूने किसी न किसी रूप में मिल सकते हैं, जिनकी डी.एन.ए. परीक्षण से पुष्टि हो सकती है।
3. मृतक जिनकी पहचान न हो पाई हो अथवा सड़ी-गली लाशों, शवपरीक्षण के दौरान उनके उत्तकों को भेजना परंपरागत व व्यावहारिक होता है।
4. पैतृकता विवादों, संदिग्ध माता-पिता व संतान के डी.एन.ए. मिलान करके पैतृकता का पूर्णरूपेण निर्धारण किया जा सकता है।
5. नवजात शिशु के बदले जाने पर डी.एन.ए. फिंगर प्रिटिंग तकनीक कारगर होती है।
6. भ्रूण हत्या व शिशु हत्या के संदिग्ध मामलों में भी यह तकनीक कारगर है।
7. अन्य रक्त संबंधी संबंधों के निर्धारण में भी उपरोक्त तकनीक की उपयोगिता पाई गई है।
8. घटनास्थल पर यदि मानव के अतिरिक्त किसी अन्य जानवर का रक्त मिलता है तो इस विधि से जानवर और मनुष्य के रक्त की भिन्नता के अतिरिक्त किस जानवर का रक्त है इसका सहजता से पता चल जाता है। मान लिया जाए एक विशेष नस्ल के कुत्ते और उसी विशेष कुत्ते के रक्त की पुष्टि से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि संदिग्ध विशेष कुत्ता एक विशेष व्यक्ति के पास है जिसको कि पुलिस शंका के दायरे में लेकर पूछताछ कर सकती है।
9. सामूहिक बलात्कार की घटनाओं में डी.एन.ए. परीक्षण नितान्त ही आवश्यक है, क्योंकि इस प्रकार की घटनाओं में योनि में दो अथवा दो से अधिक वीर्य के नमूने उपलब्ध होते हैं जिसके लिए वाई.एस.टी.आर (YSTR) तकनीक ही बेहतर है जिसे 'शार्ट टेन्डम' की संज्ञा भी दी गई है।
10. माइटोकोन्ड्रियल डी.एन.ए. से विवादित संतानों की निःसंदेह एक वैध माता की पुष्टि संभव है।
11. वनस्पतियों और कीटों इत्यादि के पारस्परिक संपर्क

में आने से जो संकर नस्ल निर्मित होती है उन विषमताओं की जानकारी हेतु डी.एन.ए. तकनीक का प्रयोग लाभप्रद है।

12. विधि विज्ञान प्रयोगशालाओं में विभिन्न प्रकार के कीटों और उनकी अवस्थाओं की डी.एन.ए. प्रोफाइलिंग तकनीक से यह रहस्य विदित हो जाता है कि मृत्यु कब हुई? ऐसा इसलिए संभव है कि कीटों में अलग तरह की डी.एन.ए. होता है।

हरवर्ड मैडीकल स्कूल के डा. क्लिफोर्डजेन्टेविन ने भ्रूणावस्था में मनचाही आकृति निर्मित करने की प्रभावी पद्धति विकसित कर ली है। जैव विज्ञानिकों ने "हैज हाग" नाम से रहस्यमयी जीन ढूंढ निकाले हैं जो मनचाही आकृति अथवा अपराधमुक्त संतुलित व समीकरणयुक्त रचनाएं बनाने के लिए भ्रूण को ढालने में सक्षम होते हैं। ये जीन जब अपनी नियंत्रण रेखा के घेरे में आ जाते हैं, तो इनसे विशिष्ट प्रकार के माफोजीन्स मालीक्यूल को सरलता से पृथक किया जा सकता है जो भ्रूण की भावी रूपरेखा (मेकर ऑफ स्ट्रक्चर) का कार्य करती है जिनको कि हैजहॉग की संज्ञा दी गई है। यदि ये मालीक्यूल एक बार विकसित हो रहे भ्रूण में प्रविष्ट करवा दिए जाएं तो शनै-शनै निर्दिष्ट आकृति एवं अपराधमुक्त शरीर की रचना की जा सकती है। यह प्रक्रिया अपने आप में रहस्यमयी होती है और मनचाहे मस्तिष्क का विकास किया जा सकता है अचूक दक्षता व प्रतिबद्धता हो और अपराध प्रवृति की ओर उन्मुक्त न हो और इन जीन्स के बलबूते पर ही कुशल हाथ, पैर, सौन्दर्ययुक्त चेहरा, गिद्ध जैसी नजर वाली तीक्ष्ण आंखें, नासिका इत्यादि का विकास संभव है। जेनेटिक इंजीनियरिंग के माध्यम से डिजाइनर बेबी का भविष्य स्पष्ट रूप से उज्जवल व उद्दीपमान होता जा रहा है। अब चिकित्सक भी जेनेटिक थेरेपी को अपनाते समय यह निर्धारित करने में सक्षम होंगे कि आने वाली संतान में एच्छिक गुण विद्यमान हैं। वंशानुगत गुण अब प्रयोगशाला में ही निर्धारित किए जा सकेंगे। माता-पिता की त्रुटियों को अलग-थलग करके भ्रूण के अंश से निकाल कर इसे परिवर्तित कर दिया जाएगा। पुरुष के शुक्राणु और महिला के अंडाणु का मेल करवा कर भ्रूण को मादा के शरीर से बाहर ही विकसित किया जाएगा। तत्पश्चात उसमें अत्यंत सूक्ष्म और संवेदी प्रणाली को अपनाते हुए कृत्रिम मानवीय गुणसूत्रों को इन्जेक्शन के माध्यम से पहुंचा दिया जाएगा। इनमें वे जीन्स होंगे जो निरंतर अपराध बोध प्रवृति व अन्य हानिकारक अंशों से लड़ने की क्षमता रखेंगे व निरोगी काया का विकास करेंगे। इस प्रकार से जनित शिशु अपने वंशजों और यहां तक की माता के पूर्वजों से पनपने वाली अतिक्रमण की परंपरा और रोगों से मुक्त होंगे। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में चल रहे शोधों से अपनाए गए प्रयासों से सृष्टि का एक नया रूप देखने को मिलेगा और आने वाली पीढ़ियां शांति से जी सकेंगी। सांताक्रूज (अमेरिका) स्थित यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया के निर्देशक 'डेविड हसलर' के अनुसार उनकी टीम ने उस जीन HARIF एच.ए.आर.आई.एफ. को ढूंढ निकाला है जिसने मनुष्य को सबसे दिमागदार बनाया है। हसलर और उनकी टीम 49 ऐसे तथ्यों का अध्ययन कर रहे थे जिससे चिंपाजी से मनुष्य के बनने की प्रक्रिया साकार हुई। डी.एन.ए.कोर्ड के विश्लेषण में जहां चिंपाजी और चिकन के मध्य केवल दो अंतर मिले वहीं चिंपाजी और मनुष्य के मध्य 18 प्रकार के अंतर पाए गए।

रक्त कणों में विशेष प्रकार के प्रोटीन पदार्थ होते हैं जिन्हें हम एन्टीजन (प्रतिजन) कहते हैं। यह देखने में आया है कि प्रतिजनों की संख्या 160 से भी ऊपर है जिनका संरचना स्टीरियों रसायनिक प्रकार की होती है। यदि इनकी पूर्णरूपेण पहचान हो जाए तो इससे अक्षरशः यह पता चल जाता है कि उक्त रक्त वास्तव में मनुष्य का है या अन्य जीव-जन्तु का। इसके अतिरिक्त रक्त में अन्य प्रकार के प्रोटीन और कोशिकीय प्रकिण्व पाए जाते हैं और इस प्रकार से 150 से अधिक प्रोटीन और

250 से अधिक प्रकिण्वों को पहचाना जा सका है। समयानुसार प्रतिजनों के विषय में गहन रुचि देखने को मिली है और इस क्षेत्र में और भी कुछ करने योग्य है। प्रतिजन के प्रतिरूप प्लाज्मा या सीरम में प्रतिरक्षक भी पाए जाते हैं। वे बड़े आकार के और विविध संरचना वाले होते हैं परंतु उनकी संरचना प्रतिजनों के प्रतिकूल होती है। निश्चित है कि यदि एक विशेष प्रकार का प्रतिजन रक्तकणों में मिलता है तो उसी विशेष प्रकार का प्रतिरक्षक उक्त सीरम में विद्यमान नहीं होता।

भारतवर्ष में पैतृक विवाद की घटनाएं पाश्चात्य

माता-पिता के रक्त वर्ग	संतान का संभावित रक्त वर्ग
ओ और ओ	ओ
ओ और ऐ	ओ, ए
ओ और बी	ओ, बी
ए और ए	ए और ओ
बी और बी	बी और ओ
ए और ए-बी	ए, बी, ए-बी
बी और ए-बी	ए, बी, ए–बी
ए बी और ए-बी	ए, बी, ए-बी
ओ और ए-बी	ए, बी
ए और बी	ओ, ए, बी, एबी

एम.एन. प्रकार और आनुवांशिकी

माता-पिता के रक्त वर्ग का प्रकार	संतान के रक्त वर्ग का प्रकार
एम और एम	एम
एन और एन	एन
एम और एम-एन	एम, एम एन
एन और एम-एन	एन, एम एन
एम और एन	एम एन
एम एन एम एन	एमएन एम एन

देशों की अपेक्षा कम देखने को मिलती है क्योंकि हमारे राष्ट्र का सामाजिक स्तर अन्य राष्ट्रों से भिन्न है, परंतु आधुनिक युग में ऐसी घटनाएं देखने को मिल ही जाती हैं। डेनमार्क में 10000 से भी अधिक रक्त के नमूने प्रयोगशालाओं में पैतृक विवादों के लिए परीक्षण किए जाते हैं। मैंडल के नियम के अनुरूप बच्चों माता-पिता से रक्त वर्ग के नमूने आते हैं। यदि माता-पिता दोनों का ही रक्त वर्ग 'ओ' हो तो संतान भी 'ओ' वर्ग की ही होगी न कि 'ए, बी' अथवा 'ए बी' वर्ग की।

आधुनिक युग में पैतृकता विवाद परीक्षण में एक

नया परीक्षण हुमैन ल्युकोसाइट एंटीजन (एच.एल.ए.) विकसित हुआ है। श्वेत रक्त कणों पर एक विशेष प्रकार के एंटीजन देखे गए हैं। यदि एक व्यक्ति को पिता मान कर उसे बाहर न रखा गया हो तो 90 प्रतिशत संभावना यही बनी रहती है कि वह पिता ही है। ए, बी, ओ रक्त वर्गीकरण से ऐसी संभावनाओं में वृद्धि हो जाती है।

मनुष्य में एम और एन या दोनों प्रकार के प्रतिजन मिल सकते हैं अतएव इन 6 वर्गों को 18 निम्न वर्गों में भी आबंटित किया जा सकता है। ऐसा पाया गया है कि प्रतिजन 'एम' के अनुरूप कोई भी प्रतिरक्षी नहीं है, परंतु प्रतिरक्षी 'एम' बहुत ही कम देखने को मिलता है। अतएव ये प्रतिजन रक्त परिवर्तन में अवरोध उत्पन्न नहीं करते परंतु रक्त वर्गीकरण में इनका विशेष ही महत्व है। इसी प्रकार एक विशेष प्रकार के प्रतिजन 'पी' का आविष्कार हो चुका है। ऐसा देखने में मिला है कि कुछेक व्यक्तियों के रक्त में यह प्रतिजन मिलता है अन्य व्यक्तियों में यह नहीं पाया जाता। प्रतिजन 'पी' के फलस्वरूप प्रतिरक्षक 'पी' कुछेक सामान्य व्यक्ति विशेष में भी उपलब्ध है। अतएव 'पी' प्रतिजन के आधार पर 18 रक्त वर्ण 'पी' घनात्मक व 'पी' ऋणात्मक रूप से निर्धारित किए गए हैं।

रक्त में पाया जाने वाला रीसस तथ्य पैतृकता विवाद की घटनाओं को सुलझाने में सहायक है। परंतु एन्टीसीरा तैयार करने की तकनीक इतनी टेढ़ी है जिसके कारण इन तथ्यों की सहायता से घटनाओं को सुलझाना दुर्गम है।

रक्तवर्गीय पदार्थों का अन्य शारीरिक द्रव्यों में पाए जाने से सीरम विज्ञान क्षेत्र में व्यापक स्तर पर अन्वेषण आरंभ हो चुका है। लगभग मानव की 80 प्रतिशत जनसंख्या में उसी प्रकार के रक्तवर्गीय पदार्थ पाए जाते हैं। लार व वीर्य इस प्रकार के पदार्थ अत्यधिक होते हैं क्योंकि इनमें रक्त से भी चारगुणा अधिक ये पदार्थ मिलते हैं। ये पदार्थ जल में घुलनशील हैं और कोशिकीय पदार्थ इनके बहाव में गतिरोध उत्पन्न करते हैं। इनका मिश्रित तलछटीकरण तकनीक से रक्त वर्ग निर्धारित किया जाता है।

रक्तदाता बनेंगे यूनिवर्सल डोनर

आधुनिक आविष्कार के कारण लाल रक्त कोशिकाओं की सतहों पर एंजाइमज की रासायनिक प्रतिक्रिया को परिवर्तित करने में आशातीत सफलता प्राप्त हो चुकी है। यह एक नवीनतम उपलब्धि है। ब्लड ट्रांसफ्यूजन में इसके योगदान से चिकित्सा जगत में एक नई क्रांति का सूत्रपात हुआ है। इसके अतिरिक्त इस नवीनतम तकनीक से रक्त को स्थानांतरित करने के लिए और अत्यावश्यक रक्त ग्रुप की उपलब्धता से जुड़ी समस्याओं का सहज रूप से निदान हो चुका है।

सारगर्भित, विवेचनात्मक व तर्कसंगत दृष्टिकोण यह है कि उसी रक्तवर्ग के खून को चढ़ाने की तकनीक उपलब्ध न होने से गंभीर रोगों से ग्रसित रोगियों व दुर्घटना में आहत हुए पीड़ितों को अत्यंत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। कुछेक परिस्थितियों तो लोगों के सम्मुख अवैध रूप से रक्त खरीदने का जोखिम भी उठाना पड़ता था अथवा उसी रक्त वर्ग के अभाव में रोगी स्वर्ग सिधार जाता था। वास्तव में तरलीय खून के रक्तवर्ग को पृथक-पृथक करने की प्रक्रिया तो कारगर हो चुकी है, परंतु शुष्क रक्त से खून के ग्रुप को निकालना एक जटिल प्रक्रिया है और ए, बी, एबी या ओ ग्रुप की उपयोगिता भी पारस्परिक रूप से देने से भयंकर परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं क्योंकि खून चढ़ाने से पूर्ववत इनकी उपयोगिता को जानने के लिए परीक्षण व क्रास परीक्षण किया जाता है। इस प्रकार की जांच-पड़ताल प्रारंभिक दौर में पुरानी तकनीक पर आधारित है और अब तक भी इसका कोई ठोस व सरल विकल्प का विकास नहीं हुआ है। प्रारंभिक काल के परीक्षणों में खून चढ़ाने के

लिए वर्ष 1990 में ए, बी, ओ ग्रुप और वर्ष 1937 में "रेसस" रक्त वर्ग प्रणाली नामक महत्वपूर्ण आविष्कार हुआ। यह तो सर्वविदित है कि गलत रक्त वर्ग का खून चढ़ाना एक मनुष्य के लिए जानलेवा प्रमाणित होता है, परंतु शल्य चिकित्सा व दुर्घटना में मनुष्य के आहत होने पर खून चढ़ाने की नितांत आवश्यकता होती है।

डेनमार्क के वैज्ञानिकों ने एक अनुपम तकनीक का विकास किया है जिससे किसी भी रक्तवर्ग का 'रक्तदाता' खून की चाह रखने वाले या इच्छुक व्यक्ति, रोगी, आहत अथवा बीमार व शिथिल व्यक्ति को आवश्यकता पड़ने पर अविलम्ब रक्त प्रदान कर सकता है। इस नई तकनीक के उजागर होने से आहत व भयंकर बीमारियों से ग्रसित लोगों में एक नई आशा की किरण प्रस्फुटित होने लगी है। 'हेनरिक क्लोसेन' की अध्यक्षता में कोपनहेगन विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों के संयुक्त प्रयास के फलस्वरूप रक्त को किसी भी व्यक्ति को चढ़ाने में एक चर्मोत्कृष व अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है। संयुक्त दल ने गहन अनुसंधान करके एक ऐसे "नितांतावश्यक द्रव्य को ढूंढ निकाला है जिसे प्रत्येक रक्त वर्ग के व्यक्ति को किसी भी व्यक्ति का खून चढ़ाया जा सकता है। इस प्रक्रिया में रूधिर में उपलब्ध रक्त कोशिकाओं में सामंजस्य स्थापित करने के उपरांत किसी भी रक्त वर्ग के रोगियों अथवा आहत व्यक्तियों को खून सरलता से चढ़ाया जा सकता है। इस प्रक्रिया के साकारात्मक परिणाम ही देखने को मिले हैं। क्योंकि किसी भी रक्त वर्ग के व्यक्ति विशेष में लाल रक्त कोशिकाओं के समुचित उपयोग के लिए एंजाइम हटाने की प्रक्रिया पर्याप्त रूप से गत दशकों में क्रियान्वित हो चुकी है। परंतु इनमें 'ग्लाइकोसिडेज' एंजाइम की अनुपस्थिति व अभाव से उपरोक्त तकनीक कारगर रूप से विकसित न हो सकी। उदाहरणार्थ जब 'ओ' रक्त वर्ग के आहत व्यक्ति को 'ए' या 'बी' रक्त वर्ग के व्यक्ति का खून चढ़ाया जाता है तो रक्त कोशिकाओं की सतहों पर पाए जाने वाले अपरिचित मोलीक्यूल आहत व्यक्ति को रासायनिक परिवर्तन से शारीरिक हानि पहुंचा कर उसे मरणासन कर सकते हैं। फलस्वरूप गुर्दों पर नाकारात्मक प्रभाव व मुंह या कान से खून के बह निकलने जैसी अप्रत्याशित घटनाएं देखने को मिली है। रक्त कोशिकाओं की सतहों पर एंजाइम के रासायनिक परिवर्तन करके ही अभीष्ट लाभ की पुनरावृति की जा सकती है। पुराने या आंशिक रूप से सड़े हुए शारीरिक तन्तुओं से भी विश्लेषण योग्य डी.एन.ए. निकाला जा सकता है।

❐

....और प्रथम पुरस्कार भारत को

(राजस्थान पुलिस की सफलता की कहानी)

डा. सुरेन्द्र कटारिया

व्याख्याता (लोक प्रशासन) एवं
यू.जी.सी. पोस्ट डॉक्टोरल रिसर्च फैलो
81/91, नीलगिरि मार्ग, मानसरोवर, जयपुर-302020

न केवल राजस्थान में बल्कि संपूर्ण भारत में पुलिस की छवि उस उपनिवेशकालीन पुलिस की है जिसका गठन तत्कालीन ब्रिटिश शासकों के हितों की पूर्ति हेतु किया गया था। स्वतंत्रता के पश्चात भी भारतीय पुलिस क्रूर, आततायी, अमानवीय, भ्रष्ट तथा अकर्मण्यता जैसे उपनामों से पहचानी जाती है तथा देश के साधारण व्यक्ति से लेकर विशिष्ट व्यक्ति तक, अनपढ़ से लेकर उच्च शिक्षित तक और श्रमिक से लेकर व्यापारी तक सभी के दिलों में पुलिस के नाम का विशिष्ट भय व्याप्त है।

ऐसे में यदि किसी भारतीय पुलिस थाने को विश्व का सर्वश्रेष्ठ थाना घोषित किया जाए तो सहसा विश्वास ही नहीं होता है लेकिन इस अविश्वसनीय सत्य को यथार्थ के धरातल पर उतारने का सफल कारनामा कर दिखाया है जयपुर शहर स्थित शिप्रा पथ पुलिस थाने ने। सन 2006 में प्रथम बार आयोजित हुए "पुलिस स्टेशन विजिटर्स सप्ताह" के दौरान हुए मूल्यांकन के पश्चात यह पुलिस थाना सभी दृष्टियों से सर्वोत्तम पाया गया है।

सामान्य परिचय

भारत के सबसे बड़े राज्य राजस्थान की राजधानी जयपुर के जयपुर शहर (पूर्व) पुलिस जिले में स्थित यह पुलिस थाना मार्च, 1996 में स्थापित हुआ था। एशिया की सबसे बड़ी आवासीय कॉलोनी मानसरोवर जो कि राजस्थान आवासन मंडल द्वारा बसायी गई है कि लगभग आधी जनसंख्या एवं आधा भौगोलिक क्षेत्र इस पुलिस थाने के अधीन है। जयपुर शहर के बाहरी क्षेत्र में स्थित इस पुलिस थाने के अधीन लगभग 2.5 लाख जनसंख्या है जो 45 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैली हुई है। इस क्षेत्र में दो दर्जन उच्च शैक्षणिक संस्थाएं स्थापित हैं तथा यहां उच्च शिक्षित नौकरीशुदा एवं पेशेवर व्यक्ति अधिक निवास करते हैं। जनसंख्या में अधिसंख्य हिन्दू, हिन्दू-सिंधी समुदाय के लोग हैं। मुस्लिम जनसंख्या 02 प्रतिशत से भी कम है। थाना क्षेत्र में श्रमिक तथा खानाबदोश व्यक्ति भी हजारों की संख्या में हैं। इस थाना क्षेत्र के अधीन 8 गांव भी सम्मिलित हैं।

इस पुलिस थाने का भवन नए प्रारूप के अनुसार निर्मित है जिसमें 20 कमरे तथा पुलिस थाना परिसर में 13 स्टाफ क्वार्टर्स फ्लैट बने हुए हैं। पुलिस थाना परिवार में स्टाफ क्वार्टर्स के पास ही एक छोटा सा मंदिर बना हुआ है। हरे-भरे दूब के लॉन सहित इस पुलिस थाना परिसर तथा इसके बाहर सैकड़ों पेड़ सुखद हरियाली प्रदान करते हैं। थाने के भीतर बहुत सारे गमलों में रंग-बिरंगे पौधे लगे हुए हैं। पुलिस कार्मिकों तथा आमजन के बैठने हेतु बैंच, सोफे तथा कुर्सियां पर्याप्त मात्रा में हैं। सभी कमरे रंग-रोगन, पेण्ट, पॉलिश, कारपेट, पर्दे, चिक, खिड़की, दरवाजे, हवा तथा प्रकाश जैसी मूलभूत सुविधाओं से परिपूर्ण हैं। पुलिस कर्मियों की पृथक् रसोई (मैस) तथा शौचालय सुविधाएं बहुत अच्छी स्थिति में हैं। जीप, वायरलैस, हथियार, दो टेलीफोन तथा अन्य आवश्यक सुविधाएं सुचारू हैं। थाने में 9 कम्प्यूटर हैं जो सभी कार्यरत हैं। बीच थाने में हरे-भरे घास के लॉन में संगमरमर का फव्वारा लगा है। यह स्थान 'पब्लिक मीटिंग' के लिए है। बाहर चारदीवारी पर सुंदर लाइटें

लगी हैं। निःशक्तजनों हेतु रेम्प बना हुआ है। थाना परिसर में पुलिसकर्मियों हेतु तथा थाना परिसर से बाहर आमजन के लिए पार्किंग व्यवस्था की गई है। थाना परिसर में बने पार्क में आगन्तुकों हेतु विश्राम की भी व्यवस्था है। हर कोने में 'डस्ट बिन' रखी हुई है।

इंसपैक्टर स्तर का एक एस.एच.ओ. 3 उपनिरीक्षक, 11 सहायक उपनिरीक्षक, 3 हैडकांस्टेबिल तथा 20 कांस्टेबिल के पद सृजित हैं। सभी पद भरे हुए हैं। कुछ अतिरिक्त कार्मिक भी यहां पदस्थापित हैं। महिला प्रकोष्ठ एक महिला सहायक उपनिरीक्षक के निर्देशन में कार्यरत हैं।

सुधार प्रक्रिया

सन 2003 से पूर्व शिप्रा पथ पुलिस थाना भी अन्य पुलिस थानों की भांति एक सामान्य थाना ही था जो क्षेत्र में होने वाली चोरियों के लिए आलोचना का शिकार रहता था। यद्यपि सम्पूर्ण राजस्थान में थानों में कम्प्यूटर पहुंचाने तथा पुलिस व्यवहार सुधार की प्रक्रिया दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में हो चुकी थी किंतु शिप्रा पथ पुलिस थाने का कायापलट का प्रमुख श्रेय थाना प्रभारी श्री सुनील पूनिया को दिया जाता है। श्री पूनिया ने 01 अक्टूबर, 2004 को थाना प्रभारी का पदभार ग्रहण किया। पुलिस की बिगड़ती छवि तथा जनता के असहयोग से व्यथित श्री पूनिया के मन में आता था—"क्या हम पुलिस की छवि में सुधार ला सकते हैं? क्या मैं अपने थाने को आदर्श थाना बना सकता हूँ?" विचार मंथन की इस प्रक्रिया में श्री पूनिया ने निर्णय लिया कि वे अपने अधीनस्थ कार्मिकों, उच्चाधिकारियों तथा जनता से एक साथ सहयोग मांगेंगे तथा सभी संबंधियों की अपेक्षाओं तथा समस्याओं का समाधान करने का भरसक प्रयास करेंगे तथा समूह (टीम) भावना से लक्ष्यों की प्राप्ति का सच्चे मन से प्रयास करेंगे। इस बीच नवम्बर, 2005 में जयपुर शहर के विधायकपुरी थाना को आई.एस.ओ. 9001-2001 प्रमाण पत्र मिला तो मार्च, 2006 में महानिदेशक श्री ए.एस. गिल ने अन्य पुलिस थानों को भी प्रयास करने के निर्देश दिए। इस प्रकार पुलिस थानों में गुणवत्ता वृद्धि के प्रयास होने लगे।

41 वर्षीय श्री पूनिया ने सर्वप्रथम थाने के समस्त स्टाफ की बैठक लेकर पुलिस सुधार प्रक्रिया में उनका सहयोग मांगने का निर्णय किया। श्री पूनिया का मानना है कि **व्यक्ति दिमाग से नहीं बल्कि दिल से बदलता है।** इसी मान्यता के आधार पर उन्होंने थाने के समस्त पुलिसकर्मियों से आह्वान किया कि वे अपनी कार्यशैली में समयानुकूल परिवर्तन लाएं ताकि जनता में पुलिस की छवि सुधर सके। बैठक में सभी अधीनस्थ कार्मिकों से निर्भीक एवं स्पष्ट रूप से उनके सुझाव मांगे गए। उनकी समस्याएं जानी गई। श्री पूनिया ने सभी कार्मिकों को विश्वास दिलाया कि वे उच्चाधिकारियों एवं समुदाय से सहयोग प्राप्त कर यथासंभव समस्याएं दूर करेंगे तथा सभी के साथ निष्पक्ष व्यवहार करेंगे। साथी कर्मियों से बैठक करने के पश्चात श्री पूनिया को आभास हो चुका था कि पुलिसकर्मियों की समस्याओं जैसे—मैस की अव्यवस्था, फर्नीचर एवं स्टेशनरी का अभाव, लगातार थकाऊ काम के घण्टे, जनता से असहयोग तथा राजनीतिक एवं प्रशासनिक दबाव इत्यादि को दूर किए बिना उनका असंतोष कम नहीं होगा अतः स्वाभाविक है कि सुधार प्रक्रिया में उनका सकारात्मक सहयोग नहीं मिलेगा। श्री पूनिया ने सम्पूर्ण सुधार प्रक्रिया की एक कार्य योजना अपने मस्तिष्क में तैयार की तथा दिन-रात उसी पर विचार करने लगे। उन्होंने एक वादा स्वयं से किया कि वे किसी भी परिस्थिति में भेदभाव नहीं करेंगे तथा दबाव में आकर निर्णय नहीं लेंगे। कानून तथा निर्धारित प्रक्रिया का पालन करेंगे ताकि टीम लीडर के व्यवहार पर प्रश्न ही न उठे। उन्हें पता था अधीनस्थ व्यक्ति नेता के व्यवहार का सतत् मूल्यांकन करते हैं।

इसके पश्चात श्री पूनिया उच्चाधिकारियों यथा—वृत्ताधिकारी (उपाधीक्षक पुलिस) तथा पुलिस अधीक्षक से मिले तथा सुधार प्रक्रिया की कार्य योजना से अवगत कराते हुए उनसे प्रशासनिक एवं नैतिक सहयोग की मांग की। वस्तुतः शिप्रा पथ थाने के सुधार यात्रा में मुख्य नायक श्री ए.एस. गिल, महानिदेशक; श्री ओ.पी. गलहोत्रा, महानिदेशक; श्री वी.के. सिंह, पुलिस अधीक्षक; श्री संजय श्रोत्रिय, अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक तथा श्री ज्ञानचन्द यादव, उपाधीक्षक जैसे कुशल उच्चाधिकारी थे जिन्होंने श्री पूनिया तथा उनके कार्मिकों को भरपूर समर्थन एवं सहयोग प्रदान किया। श्री पूनिया ने अनौपचारिक रूप से अपने उच्चाधिकारियों से यह आश्वासन लिया कि वे कभी भी किसी मुकदमे या विषय पर अवांछित दबाव नहीं डालेंगे ताकि थाने में अपनायी जा रही सुधार प्रक्रिया एवं नवाचारों को धक्का न लगे। उच्चाधिकारियों ने श्री पूनिया के विचारों से सहमति जताते हुए यथासम्भव अधिकाधिक प्रशासनिक एवं नैतिक सहयोग देने का वायदा किया। इसके पश्चात तत्काल ही श्री पूनिया ने कम्यूनिटी लायजन ग्रुप (सी.एल.जी.) की बैठक बुलाई तथा पुलिस कार्यप्रणाली में सुधार लाने तथा शिप्रा पथ थाने को आदर्श थाना बनाने की कार्य योजना प्रस्तुत करते हुए उनके विचार जाने। सी.एल.जी. सदस्यों ने बताया कि आमजन में थाना क्षेत्र में चोरियों तथा थाने में पुलिस के व्यवहार की शिकायतें बहुत हैं अतः इस दिशा में प्रयास होना चाहिए। सी.एल.जी. के सुझाव पर श्री पूनिया ने स्थानीय कॉलोनी के वार्डों में सेक्टरवार बनी नागरिक समितियों से बीट कांस्टेबल के माध्यम से संपर्क किया। श्री पूनिया ने प्रत्येक प्रकार की समस्याओं तथा अपराध प्रवृत्तियों की जानकारी भी एकत्र की। तत्पश्चात नागरिक समितियों की बैठक में स्वयं थानाधिकारी या बीट कांस्टेबल या अन्य किसी पुलिस कार्मिक ने शिरकत कर जनता का सहयोग मांगा तथा पुलिस द्वारा सक्रियता बरते जाने का पूर्ण भरोसा दिया। यद्यपि आमजन को पुलिसकर्मियों पर भरोसा नहीं हुआ।

शिप्रा पथ थाने की छवि सुधारने तथा जनता का मित्र बनाने हेतु राजस्थान पुलिस की 'राजस्थान पुलिस—आमजन में विश्वास—अपराधियों में डर' पंच लाईन अर्थात को थाने पर लिखवा दिया गया। आमजन के मन से पुलिस का भय मिटाने हेतु सर्वप्रथम थाने के गेट पर बंदूक लेकर खड़े होने वाले मूंछदार पुलिसकर्मी को हटाया गया तथा एक स्वागत कक्ष बनाया गया जहां जनसंपर्क में प्रशिक्षण प्राप्त पुलिसकर्मी को कम्प्यूटर सुविधा सहित बैठाया गया। स्वागत कक्ष में आमजन के बैठने हेतु सोफे, कुर्सी, ठण्डे पेयजल, फर्स्ट एड बॉक्स, पंखे तथा अन्य आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराई गई। स्वागत कक्ष की दीवारों तथा सम्पूर्ण थाना परिसर में आमजन के अधिकार, पुलिसकर्मियों के कर्त्तव्य, शिप्रा पथ थाने की प्राथमिकताएं, उच्चाधिकारियों के कार्यालय, निवास तथा मोबाइल नम्बर, हिरासत कक्ष में गिरफ्तार व्यक्ति के अधिकार संबंधी सूचनापट्ट, थाने में स्वीकृत पद, उपस्थित, अनुपस्थित कार्मिकों का दैनिक विवरण इत्यादि नोटिस बोर्ड प्रिण्ट कराके लगा दिए गए। थाने में आने वाले प्रत्येक परिवादी के साथ आत्मीयतापूर्ण व्यवहार किया जाने लगा। इस मानसिकता को छोड़ा गया कि एफ.आई.आर. लिखने से थाने में अपराधों की संख्या अधिक दिखती है बल्कि प्रत्येक परिवादी की शिकायत दर्ज होने लगी। एफ.आई.आर. का समस्त कार्य कम्प्यूटर पर करना अनिवार्य कर दिया गया। यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि किसी थाना क्षेत्र में पंजीकृत अपराधों की संख्या बढ़ना पुलिस के कार्य निष्पादन के मूल्यांकन का सही पैमाना नहीं है क्योंकि अपराधों का संबंध पुलिस से कहीं अधिक सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, न्यायिक तथा आर्थिक परिवेश से जुड़ा होता है। आल्टस ग्लोबल एलायंस ने भी अपराधों की संख्या को निर्णायक सूचकांक नहीं माना है। इस थाने में द्वार के बाहर दो बॉक्स लगे हैं। शिकायत पेटी में परिवादी

अपनी शिकायत लिख कर डाल सकता है तथा दूसरे बॉक्स में सुझाव डाले जा सकते हैं। इन दोनों पेटियों की नियमित जांच होती है तथा प्राप्त कागजात, शिकायत एवं सुझाव रिकॉर्ड में लिए जाते हैं। सी.एल.जी. सदस्यों के साथ थाना प्रभारी उस पर कार्रवाई सुनिश्चित कराते हैं। इस थाना क्षेत्र तथा जयपुर शहर के अन्य संस्थानों में कानून की पढ़ाई कर रहे विद्यार्थी भी परिवादियों को कानूनी सहायता एवं परामर्श उपलब्ध कराते हैं। थाना क्षेत्र के प्रत्येक सेक्टर या बीट के हर 10-15 मकान के बाद मुख्य दीवार पर थानों के फोन नंबर तथा बीट के अधिकारी का नाम तथा उसका मोबाइल नंबर जनता की सूचना हेतु लिखवाया हुआ है।

शनैः-शनैः थाना क्षेत्र के नागरिकों में शिप्रा पथ पुलिस थाने की कार्यप्रणाली एवं व्यवहार की चर्चा होने लगी। मीडिया में भी सकारात्मक स्थान मिला। सुधार प्रक्रिया के दौरान स्वागत कक्ष में रखवाए गए 'विजिटर्स रजिस्टर' में आगन्तुकों ने पुलिस तंत्र की तथा यहां की कार्यप्रणाली की भूरि-भूरि प्रशंसा की। जन साधारण में पुलिस की छवि सुधारने का सुपरिणाम यह हुआ कि स्थानीय समुदाय ने थाना परिसर में सुविधाएं बढ़ाने हेतु वित्तीय एवं भौतिक सहयोग देना शुरू कर दिया। इस थाने में लगे दोनों घास के लॉन, सैकड़ों गमले, वाटर कूलर, डेजर्ट कूलर, कुर्सियाँ, सोफे, मेज, एल्यूमिनियम एण्ड ग्लास डोर, खिड़कियों की चिक, कारपेट, संगमरमर से बना फव्वारा, फर्स्ट एड बॉक्स, सजावटी लाइटें, शेल्टर, फ्रिज तथा टेलिविजन इत्यादि जनसहयोग से प्राप्त हुए। आगन्तुकों हेतु बाहर लॉन में बैठने हेतु बैंच, निःशक्तजनों हेतु रैम्प का निर्माण भी जनता के सहयोग से हुआ। पुलिसकर्मियों की रसोई का जीर्णोद्धार तथा डायनिंग टेबिल जनता ने प्रदान कर पुलिस का मनोबल बढ़ाया। रेनबो दूरसंचार कंपनी ने इस थाने परिसर की साफ-सफाई तथा गार्डन की देखभाल का जिम्मा ले रखा है। सभी कमरों, बरामदों तथा रसोई इत्यादि में पंखे लगने, थाना परिसर की चारदीवारी पर लाईटे लगने, थाने में वाटर कूलर तथा टेलिविजन लगने और नौ कम्प्यूटर्स के संचालन से बिजली का बिल बढ़ना स्वाभाविक था किंतु सभी पुलिसकर्मियों ने विद्युत के अपव्यय को रोकने की आदत विकसित कर ली तथा परिणामतः बिजली की अधिक खपत नहीं हो रही है।

मानव संसाधन विकास को प्राथमिकता हेतु थाना कार्मियों को योग कराया जाने लगा ताकि उनका मानसिक तनाव कम हो सके। पुलिस मुख्यालय, पुलिस लाईन, पुलिस अकादमी तथा अन्य संस्थाओं में यहां के कार्मिकों को लघु अवधि के सेवाकालीन प्रशिक्षणों में भेजा गया। प्रत्येक कार्मिक की समस्याओं एवं आवश्यकताओं को चिह्नित किया गया तथा तद्नुसार समाधान ढूंढा जाने लगा। थाने के मैस में खाने की गुणवत्ता में भारी सुधार किया गया तथा दिन में आवश्यकतानुसार मैस में ही चाय बनाकर कार्मिकों को दी जाने लगी। थाने के बाहर से चाय मंगवाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। सभी कार्मिकों ने स्वप्रेरणा से निर्णय लिया कि वे थाना परिसर में धूम्रपान नहीं करेंगे। श्री पूनिया द्वारा उठाए गए प्रारंभिक कदमों में प्रत्येक कार्मिक के कार्य का स्पष्ट विभाजन भी था। हैड कांस्टेबिल के पर्यवेक्षण में थाने की आंतरिक प्रशासनिक कार्यप्रणाली छः खण्डों यथा—प्रशासन, रिकॉर्ड मालखाना, रात्रि गश्त, संचार तथा अन्य कार्यों में विभक्त की गई। कार्य का सही आवंटन होने से कई प्रकार की समस्याएं, दुविधाएं तथा परस्पर शिकायतें कम हो गई। थाने के प्रत्येक कमरे के बाहर नंबर अंकित कर दिए गए तथा संबंधित कार्मिकों के नामपट्ट भी लगा दिए गए ताकि आमजन को कोई परेशानी न हो। उत्कृष्ट कार्य करने वाले पुलिसकर्मी का नाम नोटिस बोर्ड पर लिखा जाने लगा।

स्थानीय समुदाय में सुरक्षा की भावना बढ़ाने हेतु रात्रि गश्त में चुस्ती लाई गई। साथ में एक नया प्रयोग भी किया गया। रात्रि गश्त हेतु 'सिविल पुलिस ऑफिसर'

प्रणाली अपनाई गई। इस प्रणाली में प्रत्येक सैक्टर (मौहल्ला) में एक या दो गार्ड नियुक्त किए गए जिनका वेतन भुगतान स्थानीय परिवारों (रु. 15 प्रतिमाह प्रति परिवार) द्वारा दिया जाता है तथा गार्ड को प्रशिक्षण एवं इस व्यवस्था का प्रबंधन स्थानीय पुलिस थाना करता है। यहां प्रत्येक परिवार की सूचनाएं भी थाने में एकत्र की गई हैं। किराएदार तथा नौकर के संबंध में फोटो, उसके पते, पहचान, सदस्यों की संख्या तथा अन्य विवरण को थाने में जमा कराना शुरू किया गया है। एक अन्य पहल के अंतर्गत प्रत्येक परिवार को पुलिस द्वारा एक प्रपत्र दिया गया है जिसका नाम है—'अपने पड़ौसी को जानो'। इस मुद्रित प्रपत्र में किसी एक मकान के सामने के तीन मकानों, अगल-बगल के दोनों मकानों तथा पीछे की ओर रहने वाले तीन मकानों के मालिक का नाम, पता, फोन, कार्य, कार्यालय, गाड़ी नम्बर, मॉडल तथा निर्माण का वर्ष इत्यादि का विवरण भर कर पुलिस को देना होता है तथा उस क्षेत्र के ब्लॉक कप्तान का नाम पता एवं फोन नंबर इत्यादि भी भरा जाता है। इस प्रपत्र की एक प्रति भरने वाला स्वयं रखता है ताकि क्षेत्र में अपराधों पर अंकुश लगाने में पुलिस को सहायता मिले।

राजस्थान पुलिस के महानिदेशक श्री ए.एस. गिल द्वारा भी एक नवाचार किया गया है जिसे 'केस ऑफीसर स्कीम' नाम दिया गया है। इस योजना में चर्चित अपराध या घटना से संबंधित मुकदमें को सम्मिलित किया जाता है। इसमें उस केस से संबंधित समस्त पक्षों पर पुलिस अधिक सजग एवं तत्पर रहते हुए न्यायालय में साक्ष्य प्रस्तुत करने, अपराधी को समुचित दण्ड दिलाने तथा अभियोग पक्ष को सशक्त करने के अधिक प्रयास करती है ताकि चर्चित आपराधिक प्रकरणों के अभियुक्तों को शीघ्र तथा न्यायोचित दण्ड मिले और सामाजिक स्तर पर साकारात्मक संदेश पहुंचे। इस थाना क्षेत्र के चर्चित मुकदमे भी 'केस ऑफीसर स्कीम' में लिए गए तथा अपराधियों को न्यायालय से दण्ड दिलवा कर जनता में पुलिस ने विश्वास अर्जित किया। इसी कड़ी में थाने के 'मालखाने' में बरसों से पड़े विभिन्न मुकदमों से संबंधित साक्ष्य जैसे—कपड़े, हथियार, कागजात, फोरेंसिक प्रयोगशाला हेतु नमूने इत्यादि को विधिवत एवं क्रमबद्ध ढंग से समेटा एवं सहेजा गया। प्रत्येक साक्ष्य या नमूने पर प्रकरण संख्या, वर्ष, दिनांक, नाम तथा अन्य विवरण अंकित कर रखा गया ताकि आवश्यकता पड़ने पर उसे तत्काल खोजा जा सके। मालखाने में सीलन, चूहे तथा दीमक की समस्या का समाधान किया गया। इसी प्रकार प्रत्येक कमरे में रखे जाने वाले रिकॉर्ड को कोड नम्बर देते हुए अलमारियों एवं रैक्स में रखा गया। उदाहरण के लिए कमरा नम्बर एक की रैक नम्बर–एक में रखी फाइलों को नम्बर तथा उनके विषय को रैक के बाहर लगे कागज पर लिख दिया गया है। एक से लेकर दस क्रमांक की ये फाइलें क्रमश— I- केस ऑफीसर स्कीम पत्रावली, II- पुलिस जनसहभागिता, III- सी.एल.जी., IV- मकानवार सर्वे पत्रावली, V- हार्ड कोर अपराधी, VI- पुलिस प्राथमिकताएं, VII- सन 2006 में हुए राजीनामा, VIII- महिला डेस्क, IX- घरेलू कर्मचारी, ड्राईवर, चौकीदार पत्रावली तथा X- किराएदार फॉर्म विवरण से संबंधित हैं। अन्य कमरों के रिकॉर्ड आवश्यकतानुसार वर्षवार, मुकदमेवार तथा विषयवार या आवश्यकतानुसार रखे गए हैं ताकि जरूरत पड़ने पर तत्काल ढूंढा जा सके। सभी पुराने रिकॉर्ड सजिल्द रजिस्टरों में बंधवा कर क्रमशः एकत्र कर रखे हुए हैं। कुछ रिकॉर्ड कम्प्यूटर पर भी उपलब्ध हैं।

जहां तक थाने में हिरासत में रखे जाने वाले व्यक्तियों की सुविधाओं का प्रश्न है, उनमें भी पर्याप्त सुधार किया गया। महिला एवं पुरुष हिरासत कक्ष तथा शौचालय पृथक-पृथक हैं। उनमें किसी भी प्रकार की दुर्घटना से बचाव के उपाय किए हुए हैं। हिरासत कक्ष के बाहर बंदी के अधिकार लिखे हुए हैं। प्रतिदिन थाने द्वारा साफ कपड़े बंदी को दिए जाते हैं। अपराधियों से पूछताछ

हेतु पृथक से कक्ष बनाया हुआ है। यहां परम्परागत थर्ड डिग्री का प्रयोग नहीं किया जाता है बल्कि सामाजिक-मनोवैज्ञानिक तरीकों पर अधिक बल दिया जाता है ताकि अपराधी सच उगल सके। आपसी कहा-सुनी तथा साधारण तकरार के मामलों में राजीनामा कराने के प्रयास भी किए जाते हैं। इसका भी विवरण थाने में रखा जाता है।

इस पुलिस थाने के समस्त बरामदे सूचनापरक तथा प्रेरणादायी नोटिस बोर्ड या पोस्टर से भरे पड़े हैं। जिनमें राजस्थान पुलिस की पंचलाईन (ध्येय), पुलिस की प्राथमिकताएं, आदर्श पुलिस थाने की विशेषताएं, नागरिकों के अधिकार, भ्रष्टाचार निरोधक तंत्र, सूचना का अधिकार, पुलिस के कर्तव्य, लोकायुक्त से शिकायत विधि, निःशुल्क विधिक सहायता की प्रक्रिया, पुलिस गुणवत्ता की नीति, बन्दियों के सुरक्षा प्रबंध, शिप्रा पथ थाने की प्रगति, क्षेत्र में वाहन चोरी होने के चिह्नित स्थान, महिला उत्पीड़न रोकथाम इत्यादि के अतिरिक्त विभिन्न सामाजिक समस्याओं एवं जनजागृति के भी प्रेरणादायी पोस्टर्स लगे हुए हैं। इनमें नेत्रदान, दहेज निषेध, बाल श्रम निषेध तथा यातायात सुरक्षा एवं गृह सुरक्षा जैसे विषय सम्मिलित हैं।

इस पुलिस थाने में उपलब्ध विजिटर्स पुस्तिका में आमजन सहित विभिन्न आगन्तुकों जैसे—महानिदेशक सीमा सुरक्षा बल, मध्यप्रदेश एवं हरियाणा पुलिस के पदाधिकारी, विश्वविद्यालय, महाविद्यालयों तथा आई.आई.टी. कानपुर के संकाय सदस्य, सेना के कर्नल, दूरदर्शन निदेशक तथा ग्रेट ब्रिटेन के पर्यटक इत्यादि द्वारा अंकित टिप्पणियां यह सिद्ध करती है कि यहां आने वाले व्यक्ति कितना रोमांच एवं संतुष्टि अनुभव करते हैं। इस प्रकार शिप्रा पथ थाने ने सन 2005 से 2006 की दो वर्षीय तीव्र सुधार यात्रा में बहुत सी मंजिलें केवल प्रतिबद्धता, टीम भावना तथा दृढ़ संकल्प के बलबूते प्राप्त की।

और फिर आया 'पुलिस स्टेशन विजिटर्स सप्ताह'। यह एक अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता थी। आल्टस ग्लोबल अलायंस नामक अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी संस्था ने 29 अक्टूबर से 4 नवम्बर, 2006 तक 'पुलिस स्टेशन विजिटर्स सप्ताह' आयोजित किया। विश्व के 23 देशों के 471 पुलिस थानों ने इस प्रतियोगिता में भाग लिया। शिप्रा पथ थाने के थानाधिकारी तथा कार्मिकों को पूर्ण विश्वास था कि वे इस प्रतियोगिता में प्रतिद्वन्द्वियों को कड़ी टक्कर देंगे क्योंकि उनके पास बेहतरीन भौतिक सुविधाएं, आमजन का सहयोग, प्रतिबद्धता एवं पारदर्शिता, उच्चाधिकारियों की अभिप्रेरणा, स्थानीय क्षेत्र में लोकप्रिय छवि तथा आम जनता से किए गए अच्छे व्यवहार से उपजा आत्मविश्वास इत्यादि वह सब कुछ था जो उन्हें एक आदर्श पुलिस थाना बनाने के लिए चाहिए था।

आल्टस द्वारा भारत में दो संस्थाओं को 'साथी संगठन' बनाया गया जिन्होंने आल्टस से सहमति ज्ञापन तैयार कर भारत में सम्पूर्ण आयोजन को समन्वित तथा क्रियान्वित किया जबकि नौ सहभागी संगठनों ने विजिटर्स एवं अन्य सामग्री उपलब्ध करायी। आल्टस द्वारा निर्मित किट (प्रश्नावली एवं मूल्यांकन सूची) के अनुसार पुलिस थानों का निरीक्षण एवं अवलोकन कार्य हेतु विजिटर्स प्रशिक्षित किए गए। आल्टस के किट में 20 प्रश्न सम्मिलित थे।

प्रत्येक प्रश्न के उत्तर को **लिकर्ट स्केल** के अनुसार 1 से 5 अंक दिए गए। इन प्रश्नों में भौतिक सुविधा, सामुदायिक उन्मुखता (सहभागिता), समानता का व्यवहार, पारदर्शिता तथा जवाबदेयता और हिरासत की हालत से संबंधित प्रश्न थे। प्राप्त उत्तरों को निम्नानुसार भार दिया गया—

पूर्णतया अपर्याप्त	— 1 (20 प्वाइण्ट)
अपर्याप्त	— 2 (40 प्वाइण्ट)
पर्याप्त	— 3 (60 प्वाइण्ट)
पर्याप्त से अधिक	— 4 (80 प्वाइण्ट)

उत्कृष्ट — 5 (100 प्वाइण्ट)

प्रत्येक प्रश्न को एक निर्धारित गणितीय सूत्र के आधार पर अंक दिए गए ताकि वैज्ञानिक प्रविधि संबंधी त्रुटि न रहे। आल्टस के विजिटर्स को यथासंभव निष्पक्ष रहने, परिस्थितियों को भांपने तथा मानव व्यवहार को समझने संबंधी विशेष प्रशिक्षण दिया गया था ताकि पुलिस थानों का प्राप्त परीक्षण परिणाम विश्वसनीय रह सके। निर्धारित अवधि में विजिटर्स ने अपने-अपने क्षेत्र के पुलिस थानों का दौरा किया। रिकॉर्ड देखे, जनता से मिले, पुलिस के उच्चाधिकारियों तथा संबंधित थाने के कार्मिक से गहन विचार-विमर्श किया। शिप्रा पथ थाने के निरीक्षण से पूर्व विजिटर्स आस-पास के लोगों से वार्ता कर उनका नजरिया जान चुके थे। इस (शिप्रा पथ) **पुलिस थाने में आयी विजिटर्स टीम के प्रमुख ने अपनी रिपोर्ट में लिखा—**"हमें इस पुलिस थाने तक पहुंचने में कोई परेशानी नहीं हुई क्योंकि रास्ते में पर्याप्त मात्रा में साइन बोर्ड लगे हुए थे। इस पुलिस थाने में पहुंच कर हम इसकी स्वच्छता देख दंग रह गए क्योंकि इसकी सफाई व्यवस्था किसी अच्छे घर या होटल से भी अधिक बढ़िया थी। यह पुलिस थाना कहीं से भी सरकारी भवन नहीं दिख रहा था। हमारी प्रार्थना पर एक तीन वर्ष पुरानी शिकायत से संबंधी दस्तावेज चार मिनिट के अंदर प्रस्तुत कर दिए गए। यहां वृद्धों तथा निःशक्तजनों हेतु रैम्प भी बना हुआ है जो कि सरकारी स्थलों पर बहुत ही कम दिखाई देता है। हमारी यहां की विजिट बहुत ही अद्‌भुत रही। इस थाने में हमने 2 घण्टा 10 मिनिट बिताए किन्तु एक भी कमी या नकारात्मक बिन्दु नहीं ढूंढ़ सके।"

विजिटर्स ने थाने के प्रत्येक कमरे, स्टोर, रसोई, शस्त्रागार, बंदी गृह, मालखाने, महिला डेस्क, अन्वेषण कक्ष, कम्प्यूटर कक्ष, कार्मिक आवास, शौचालय तथा थाना प्रभारी कार्यालय इत्यादि का सूक्ष्मता से अवलोकन किया। प्रत्येक कार्मिक से वार्तालाप किया। प्रत्येक अलमारी तथा उसके रिकॉर्ड को जांचा। विजिटर्स पुस्तिका की टिप्पणियां पढ़ी। शिकायत एवं सुझाव पेटिका के विवरण को परखा। सी.एल.जी. सदस्यों से देर तक वार्ता की। मीडिया में छपी रिपोर्ट को देखा तथा यहां तक कि पुलिसकर्मियों के खाने को भी चखा। दीवारों पर लगे नोटिस बोर्ड तथा सूचनाओं को पढ़ा। हिरासत में लिए गए व्यक्तियों से वास्तविकता जानी। रात्रि में गश्त लगाने वाले गार्डों से पूछताछ की। प्रत्येक उपकरण तथा मशीन को संचालित करके देखा।

समस्त प्रकार की छानबीन करके विजिटर्स ने अपनी किट में रखी 20 प्रश्नों की सूची के उत्तरों को अंतिम रूप दिया तथा संपूर्ण सूचनाएं आल्टस को भेज दी। विश्व भर के 471 पुलिस थानों की रिपोर्ट इंटरनेट पर उपलब्ध करा दी गई ताकि पारदर्शिता बनी रहे। एशिया से 167 पुलिस थाने इस प्रतियोगिता में सम्मिलित थे। जो भारत के अतिरिक्त मलेशिया, श्रीलंका तथा दक्षिण कोरिया से थे। इनमें 105 पुलिस थाने भारत से तथा राजस्थान राज्य से 10 पुलिस थाने भाग ले रहे थे। प्राप्त अंकों के आधार पर शिप्रा पथ थाना पहले राजस्थान में, फिर भारत में तथा इसके पश्चात एशिया में प्रथम स्थान पर आ गया। आल्टस किट के पांच प्रमुख सूचनाओं में शिप्रा पथ पुलिस थाने को निम्नानुसार अंक प्राप्त हुए-

प्रमुख पांच सूचकांकों पर शिप्रा पथ थाने का मूल्यांकन

सूचकांक	प्राप्तांक
1. सामुदायिक उन्मुखता	96.67
2. भौतिक सुविधाएं	100.00
3. जनता के साथ समान व्यवहार	98.33
4. पारदर्शिता एवं जवाबदेयता	100.00
5. हिरासत की हालात	100.00
समग्र औसत अंक	99.00

अंतिम चरण में विजिटर्स द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के साथ विशेषज्ञ की रिपोर्ट भी संयुक्त कर दी गई। इसके अतिरिक्त प्रतियोगी पुलिस थानों के प्रभारियों द्वारा विषय

विशेषज्ञों तथा 5 सदस्यीय जूरी के समक्ष कम्प्यूटर पर प्रस्तुतीकरण भी किया गया जिसमें उन प्रयासों तथा प्रक्रिया का विवरण देना था जिसकी वजह से उनका पुलिस थाना सफलता की सीढ़ी चढ़ सका। इस चरण में प्रस्तुतीकरण के पश्चात सवाल-जवाब भी हुए। शिप्रा पथ थाना प्रभारी सुनील पूनिया द्वारा दिए गए प्रस्तुतीकरण तथा प्रश्नोत्तर से न केवल अंतिम चरण में पांच महाद्वीपों से प्रथम स्थान पर आए पुलिस थानों में से किसी एक को विश्व का सर्वश्रेष्ठ पुलिस थाना चुना जाना था। प्रतियोगिता का यह कठिनतम दौर था क्योंकि विजिटर्स द्वारा दिए गए अंकों की समीक्षा के साथ-साथ इस चरण में आल्टस के प्रसिद्ध विशेषज्ञों द्वारा संबंधित थानों का पुनः निरीक्षण होना था। शिप्रा पथ थाने का निरीक्षण करने आए अमेरिकी विशेषज्ञ रिचर्ड अबोर्न भी यहां की व्यवस्थाओं एवं जनसहभागिता से बहुत प्रभावित हुए तथा उन्हें भारत जैसे विकासशील देश में ऐसा कार्यकुशल पुलिस थाना देख काफी सुखद आश्चर्य हुआ। इसी प्रकार अन्य चार महाद्वीपों में प्रथम स्थान पर आए पुलिस थानों की निरीक्षण रिपोर्ट एकत्र की गई। अंतिम रूप से निम्नांकित पांच पुलिस थानों के मध्य कांटे की टक्कर थी—

विशेषज्ञ एवं जूरी के सदस्य प्रभावित हुए बल्कि अन्य महाद्वीपों से आए प्रतियोगी पुलिस थानों के प्रभारी भी संतुष्ट नजर आए।

अंतिम चरण के प्रतियोगी

नाम पुलिस थाना	देश	महाद्वीप
1. इल्लूपेजू, लागोस	नाइजीरिया	अफ्रीका
2. शिप्रा पथ, जयपुर	भारत	एशिया
3. कानाशकी, गोव्दकानाश	रूस	यूरोप
4. 9वां पुलिस स्टेशन, साओपाउलो	ब्राजील	दक्षिण अमेरिका
5. पामडेल, लॉस एंजिल्स	अमेरिका	उत्तरी अमेरिका

...और अंत में 5 अप्रैल, 2007 को भारत के शिप्रा पथ पुलिस थाने को विश्व का सर्वश्रेष्ठ पुलिस थाना घोषित कर दिया गया। हेग के सिटी हॉल में हेग के मेयर ने जब शिप्रा पथ पुलिस थाने को विश्व के सर्वश्रेष्ठ पुलिस थाने का पुरस्कार दिया तो समस्त भारतीयों का मस्तक गौरव से ऊंचा हो गया क्योंकि यह पुरस्कार उस देश की पुलिस प्रणाली को मिला जो राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रायः आलोचनाओं से घिरी रहती है। इस उपलब्धि पर राजस्थान के पुलिस महानिदेशक ए.एस. गिल ने शिप्रा पथ पुलिस थाने के 30 कार्मिकों को समय पूर्व पदोन्नति प्रदान की। मई, 2007 में इस थाने को अंतर्राष्ट्रीय गुणवत्ता का आई.एस.ओ. प्रमाण-पत्र भी प्राप्त हो गया है। जून, 2007 में सुनील पूनिया को जयपुर शहर के वैशाली नगर पुलिस थाने में स्थानान्तरित कर दिया गया ताकि सत्कार्यों के प्रयास विस्तारित हों। 61वें स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर जोधपुर में आयोजित एटहोम समारोह में कार्यवाहक राज्यपाल महामहिम ए.आर. किदवई ने श्री पूनिया को 'पिस्टल' देकर सम्मानित किया। कहते हैं अच्छी छवि तथा बेहतर कार्य निष्पादन का उच्च स्तर पाना कई बार सरल हो सकता है किंतु इसे लंबे समय तक बनाए रखना सदैव ही कठिन होता है। वर्तमान थाना प्रभारी श्री अशोक चौहान तथा उनकी टीम इस थाने के वैश्विक स्तर को बनाए रखने में तत्परता से जुटी हुई है। उत्साहित पुलिसकर्मी कह रहे हैं—**"चक दे इंडिया"।**

भारत में पुलिस स्टेशन विजिटर्स सप्ताह, 2006 : कुछ तथ्य

1. भाग लेने वाले पुलिस थाने	—105 ● पंजाब—65 ● आन्ध्र प्रदेश—10 ● राजस्थान—10 ● मेघालय—10
2. अवलोकन हेतु ली गई टीम	— 106
3. पुलिस थाने में गए विजिटर्स	— 396
4. औसत कुल प्राप्तांक	— 69.15
सामुदायिक उन्मुखता	— 74.66
भौतिक सुविधाएं	— 67.49
जनता से समान व्यवहार	— 62.00
पारदर्शिता एवं जवाबदेयता	— 75.37
हिरासत की स्थितियां	— 66.29
5. साथी संगठन (2)	—1. एड एट एक्शन, इंडिया 2. नोर्थ-ईस्टर्न इंस्टीटयूट ऑफ डेवेलपमेंट
6. सहभागी संगठन (9)	—1. महिला प्रकोष्ठ (लुधियाना) 2. कमीशन एजेण्ट्स एसोसिएशन (भटिण्डा, पटियाला) 3. स्थानीय स्वशासन निकाय (अमृतसर, होशियारपुर 4. सामुदायिक पुलिस संदर्भ केंद्र (खन्ना, पटियाला, अमृतसर, होशियारपुर) 5. सोशल केयर एण्ड डेवेलपमेण्ट सोसायटी, चण्डीगढ़ 6. रेजिडेंट्स वेलफेयर कमेटी (सेक्टर-36, 17, 39, 34 मणि माजरा), चण्डीगढ़ 7. मार्केट वेलफेयर कमेटी (इंडस्ट्रीयल एरिया सेक्टर-11, 31), चंडीगढ़ 8. कम्यूनिटी लायजनिंग ग्रुप (सी.एल.जी.) राजस्थान 9. नोर्थ-ईस्टर्न हिल यूनिवर्सिटी, शिलांग

अनुलग्नक

क्या है आल्टस एवं उसकी कार्यप्रणाली?

'आल्टस ग्लोबल अलायंस' अप्रैल, 2004 में गठित एक अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी संस्था है जिसका मुख्यालय नीदरलैंड के प्रमुख शहर हेग में है। अपने 6 सदस्य संगठनों तथा 2 सह सदस्य संगठनों के साथ यह संस्था

पांच महाद्वीपों में कार्य करती है। विभिन्न स्थानों पर आल्टस के 300 प्रतिनिधि या कार्मिक कार्य करते हैं। जनसाधारण की सुरक्षा तथा न्याय में अभिवृद्धि कराने हेतु यह संस्था मुख्य रूप से पुलिस की जवाबदेयता बढ़ाने, उसके नजरिये में गुणात्मक सुधार लाने, सरकारी कार्मिकों, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं तथा आमजन के लिए ज्ञान एवं नवाचार का स्रोत बनने और प्रभावी एवं निष्पक्ष पुलिस के विकास के क्रम में प्रयासरत है।

फोर्ड फाउण्डेशन के 'लोकतांत्रिक' पुलिस कार्यक्रम के सहयोग से आल्टस ने सन 2002 में 10 देशों के पुलिस, कानून तथा सुधार पक्ष विशेषज्ञों की सहायता से पुलिस सुधारों को प्रोत्साहन देने हेतु एक संरचित प्रारूप (किट) तैयार किया जिसका मोस्को, रियो डि जिनेरियो, न्यू यॉर्क, प्रीटोरिया, जोहनसबर्ग तथा पंजाब में परीक्षण किया गया। इस प्रारूप में उन सूचकांकों, प्रश्नों तथा प्रविधियों का वर्णन था जिनके आधार पर पुलिस थानों की कार्यप्रणाली का मूल्यांकन हो सकता था। परीक्षण में प्राप्त निष्कर्षों का नवम्बर, 2002 में सेण्टियागो (चिली) की बैठक में विश्लेषण किया गया तथा प्राप्त निष्कर्षों एवं सुझावों के आधार सन 2004 में संशोधित किट तैयार की गई। सन 2005 में पुनः इस किट में सम्मिलित प्रश्नों तथा प्रविधि में यथावश्यक संशोधन किए गए तथा आल्टस के प्रबंध मंडल के सन 2006 में पुलिस थाना विजिटर्स सप्ताह मनाने का निर्णय किया। इस आयोजन का मुख्य उद्देश्य अच्छी परंपराओं या प्रक्रियाओं को सामने लाना, अंतर्राष्ट्रीय मानकों को बढ़ावा देना, पुलिस जनता, स्वैच्छिक संगठनों तथा सरकार के संबंधों में सकारात्मक सुधार लाना एवं पुलिस सुधारों को गति प्रदान करना था।

इसी क्रम में सन 2006 में इस विजिटर्स किट का विश्व की प्रमुख 17 भाषाओं में अनुवाद किया गया तथा 29 अक्टूबर से 4 नवंबर, 2006 तक विश्व भर में मनाए गए 'पुलिस स्टेशन विजिटर्स सप्ताह' के दौरान इस किट के आधार पर पुलिस थानों की कार्यप्रणाली एवं व्यवहार का परीक्षण किया गया। इस वैश्विक प्रतियोगिता मे 23 देशों के 471 पुलिस थानों ने भाग लिया। आल्टस के कार्य में सहायता देने हेतु 32 साथी संगठनों तथा 44 सहभागी संगठनों ने भूमिका निर्वाहित की। विश्व भर के 42 पुलिस संगठनों या अभिकरणों ने भी भरपूर सहयोग दिया। आल्टन विजिटर्स किट में सम्मिलित 20 प्रश्नों के आधार स्थानीय नागरिकों, स्वयंसेवी संगठनों तथा आल्टस के प्रतिनिधियों ने पुलिस थानों को अंक प्रदान किए। इस किट में मुख्यतः पांच बिन्दुओं यथा—सामुदायिक उन्मुखता, भौतिक परिस्थितियों, जनता के साथ समान व्यवहार, पारदर्शिता तथा जवाबदेयता और हिरासत की हालात पर पुलिस थानों का मूल्यांकन किया गया। मूल्यांकन की प्रक्रिया के दौरान अवलोकन, रिकॉर्ड सर्वेक्षण, पूछताछ तथा आम जनता के साथ बैठक सहित साक्षात्कार इत्यादि प्रविधियां सम्मिलित थी। सबसे पहले थानों को राज्य स्तर प्रतियोगिता में सम्मिलित किया गया। इसके पश्चात राष्ट्रीय स्तर, महाद्वीप स्तर तथा अंत में वैश्विक स्तर पर पुरस्कृत्त किया गया। इस प्रकार सन् 2006 में प्रथम बार आयोजित हुई 'पुलिस स्टेशन विजिटर्स सप्ताह प्रतियोगिता' का समापन अप्रैल, 2007 में हुआ।

सन 2006 की प्रतियोगिता (प्रथम) में भाग लेने वाले 23 देश इस प्रकार थे—

1.बेल्जियम	2. बेनिन
3. ब्राजील	4. कनाडा
5. चिली	6. जर्मनी
7. घाना	8. हंगरी
9. भारत	10. लातविया
11. लाइबेरिया	12. मेक्सिको
13. मलेशिया	14. नीदरलैण्ड्स
15. नाइजर	16. नाइजीरिया
17. पेरू	18. रूस
19. दक्षिण अफ्रीका	20. दक्षिण कोरिया
21. श्रीलंका	22. ग्रेट ब्रिटेन
23. संयुक्त राज्य अमेरिका	

❐

भारतीय न्याय—प्रशासन में पुलिस की भूमिका

ओमप्रकाश दार्शनिक

ए.डी.ए. फ्लैट नं. 2/2, अलोपी बाग
प्रयागराज–211006 (उत्तर प्रदेश)

प्राचीन भारत से आरंभ भारत की न्याय-प्रणाली में समाज के विकास के साथ ही न्याय-प्रशासन का कार्य राजा को हस्तांतरित कर दिया गया जो न्याय का मुख्य स्रोत समझा गया और एक नियमित सोपान की व्यवस्था की जो क्रमशः परिष्कृत प्रणाली में विकसित हुई। निरंकुशता की बढ़ती हुई इस 'राजशक्ति' पर कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्रीय विधि की प्रभुता प्रतिपादित करते हुए अधिकार के स्थान पर कर्तव्य को राजसत्ता के मूल आधार और लक्षण के रूप में प्रतिपादित किया। तत्कालीन विकृतियों हेतु समाधान के इन चाणक्यीय प्रयासों के तदनन्तर विधि की सर्वोच्चता एवं विधि संरक्षण के सिद्धांत शासन के उत्तरदायित्वों के क्रम में शीर्षस्थ स्थान प्राप्त करते चले गए। विधि-व्यवस्था तथा प्रशासन के क्षेत्र में न्याय-व्यवस्था की महत्ता पर मान्यता की स्पष्ट मोहर अंकित की गई। 'न्याय' शब्द की अवधारण की दर्शनशास्त्रीय,समाजशास्त्रीय,अर्थशास्त्रीय,राजनीतिशास्त्रीय, विधिशास्त्रीय और धर्मशास्त्रीय दृष्टिकोण से की गई मीमांसा चाहे भिन्न-भिन्न हो किन्तु प्रकारान्तर में एक बात पर निर्विवाद रूप से सभी सहमत है कि निर्विवादतः 'न्याय' किसी भी संस्था एवं व्यवस्था के सफल स्वरूप की अपरिहार्य शर्त है। फलतः यह तथ्य भी स्वीकार किया जा चुका है कि न्याय-प्रशासन हर राज्य का मेरूदण्ड है, जिस पर संपूर्ण शासन का ढांचा टिका हुआ है। यह न्यायिक प्रशासन ही है, जिसके माध्यम से मानवीय समाज में 'सत्य-ज्ञान' हेतु नीर-क्षीर अन्वेषण और व्यवस्था हेतु विधि एवं नियमों के पालन करने तथा कराने के दो मूल उद्देश्यों की पूर्ति संभव हो पाती है। भारतीय न्याय प्रशासन का दर्शन यह दर्शाता है कि यहां के न्यायप्रिय शासक केवल नियमों के पालन करने तथा कराने के माध्यम से जनता की सद्इच्छा मात्र बटोरने के प्रयास से रत नहीं रहा करते थे। मात्र विवादग्रस्त समस्याएं सुलझाना ही उनका एकमात्र ध्येय नहीं हुआ करता था, अपितु 'सत्य-ज्ञान' की प्रतिस्थापना करना भी उनका मूल लक्ष्य हुआ करता था। मनु एवं नारद ने तो राजा की तुलना इस संदर्भ में एक शल्य-चिकित्सक से की है जो अपने लक्ष्य साधन हेतु आवश्यकता पड़ने पर अंगच्छेदन से भी पीछे नहीं हटता था। न्याय में समता सिद्धांत, निष्पक्ष न्याय, कर्तव्य के अर्थ में आचरण-बोध आज भी न्याय-प्रणाली के मान्य बिन्दु हैं। इस विकास युग की इन आधारभूत मान्यताओं का कुछ प्रभाव मध्य युग में भी लक्षित हुआ, यद्यपि समय, परिस्थिति एवं विदेशी अनुभवों से कुछ भिन्नताएं भी अस्तित्व में आईं किंतु न्याय के मूल अर्थ वही प्रचलित रहे। न्याय-व्यवस्था में अन्य कई प्रयोगों को विकास का यह मध्य युग इंगित करता है, यथा—न्याय विभाग को राज-विभाग की अन्य प्रशासनिक इकाइयों की भांति पृथक करना न्यायिक संस्थाओं का विकेंद्रीकरण, केंद्रीय राजसत्ता में पुर्ननिर्देशन एवं अपीलीय शक्तियों का निहित होना, न्याय-कार्य हेतु न्यायालयों के अन्तर्गत-श्रेणीबद्ध कर्मचारियों का विस्तार करना आदि।

वर्तमान युग में प्रचलित न्याय-व्यवस्था में आज भी अनेक सुधारों के बावजूद मध्यकालीन प्रभाव चिन्हित होते हैं। न्याय-प्रशासन की पद-व्यवस्था में यथा-मुंसिफ, पेशकार, कोतवाल, इसके अतिरिक्त प्रक्रिया में-सम्मन इकरारनामा, तामील जैसे अन्य बहुप्रचलित शब्द इस प्रभाव को व्यक्त करते हैं। मुस्लिम कानून के आधार पर विकसित इस चरण ने आज भी भारत में मुस्लिम विधि

के पृथक अस्तित्व को बनाए रखा हुआ है। ब्रिटिश काल में भारत में प्रचलित न्याय-प्रशासन के अंतर्गत यद्यपि मुस्लिम विधान एवं हिन्दू विधान को ही मान्यता दी गई तथापि अपने राजनीतिक साम्राज्यवादी एवं प्रशासनिक हितों की पूर्ति हेतु अनगिनत परिवर्तन ब्रिटिशकाल में न्यायिक क्षेत्र में किए गए। तत्कालीन व्यवस्था में विविध, जटिल, असंगत एवं विरोधाभासी मान्यताओं एवं विधियों को एक सूत्र में पिरोने में ब्रिटेन शासक सफल रहे तथा भारत में भी ब्रिटिश विधान का 'कानून का शासन' व्यवहार में लाया गया और प्रक्रिया संहिताओं, कानूनों एवं अधिनियमों की भरमार ने न्यायालया में विधि की दुरूह प्रक्रिया एवं व्याख्या को प्रचलित कर दिया। कानूनों के संहिताकरण, पुलिस एवं दण्ड विधान में परिवर्तन, न्याय-प्रशासन में ऊपर से नीचे तक भी श्रृंखला निर्धारण जैसे ब्रिटिश-प्रभाव, आज भी भारत के न्याय-प्रशासन में व्यवहृत है। इस प्रकार स्वतंत्रता के पूर्व भारतीय राजतंत्र का शासन ब्रिटिश साम्राज्य की छत्रछाया में सामंती राजाओं के आधीन था। राजनीतिक दृष्टि से संपूर्ण राष्ट्र छोटी-छोटी रियासतों में विभाजित था। भारतीय राजतंत्र में कोई एकीकृत विधि-व्यवस्था नहीं थी। ब्रिटिश शासकों ने कानूनों के जिस स्वरूप का निर्धारण किया, उनमें गतिशील समाज की मूल आवश्यकताओं का आधार परिलक्षित नहीं होता था क्योंकि ब्रिटिश शासकों को भय था कि सामाजिक परिवर्तन उनके राज को खतरा पैदा कर देगा। उस समय विधिक व्यवस्था ने जो कुछ भी रूप ग्रहण किया हो, उससे सामान्य लोगों को राहत नहीं मिली। कानूनों के समक्ष कोई समानता नहीं थी क्योंकि कानून की व्याख्या शासकों की इच्छानुसार की जाती थी। विधिक तथा प्रशासनिक तंत्र के दोषों के साथ जाति एवं छुआछूत की कठोरताओं ने लोगों के सामाजिक जीवन को दबावों तथा बंधनों में ग्रस्त एक अस्त-व्यस्त ढेर बना दिया तथा देश के संसाधनों के विदेशों में आर्थिक बहाव ने यहां कष्टदायक निर्धनता की स्थिति उत्पन्न कर दी।

स्वातंत्र्योत्तर काल में नवीन संविधान के अंतर्गत भारतीय विधिक व्यवस्था में विशेष परिवर्तन आरंभ किए गए एवं उसमें लोगों की गत्यात्मक समाज संबंधों की आकांक्षाएं एवं आवश्यकताएं परिलक्षित हुई। फलतः देश की विधिक व्यवस्था का लक्ष्य सामाजिक एवं वैयक्तिक न्याय बनाया गया। न्याय को प्राथमिकता प्रदान करना एक महत्वपूर्ण विषय था, क्योंकि कानून की पुरानी अवधारणा को सामाजिक तथा राजनीतिक न्याय के अनुकूल के शासन में परिवर्तित किया गया। प्राचीन भारत में न्याय की धारणा को प्रायः धार्मिक, दार्शनिक, एवं राजनीतिक ग्रंथों में उल्लेखित किया गया जिसके परिणाम स्वरूप न्याय के आदर्श को सभी समुदायों के लिए निरपेक्ष एवं सही माना गया। प्राचीन तथा मध्यकालीन शासकों ने न्याय के सिद्धांत को शास्त्रों में ही अवतरित किया। जिसका स्पष्ट अर्थ है कि उन्होंने परिवर्तनीय आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक संबंधों की उपेक्षा की। पुनः शासकों ने न्याय की अवधारणा को अपने ही हितों की रक्षा करने में विश्लेषित किया। उन्होंने लोगों की वर्तमान स्थितियों को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया तथा उन पर दबाव डाला कि वे वही स्वीकार करें जो स्मृतियों तथा धर्मशास्त्रों में पाया जाता है। शासकों तथा अन्य शक्तिशाली समूहों ने स्थापित सामाजिक श्रेणीबद्ध संगठन के आधार पर अनेक छूटों तथा अधिकारों को भोगा। महत्वपूर्ण न्यायिक तथा प्रशासनिक शक्तियों को सुविधा प्राप्त उच्च समूहों तथा उनके द्वारा गठित संस्थाओं ने जिनमें उनके हितों तथा अधिकारों का प्रतिनिधित्व होता था, वंशानुगत आधार पर पूर्ण अधिकृत कर लिया। भारत का वर्तमान संविधान न्याय की इस परंपरागत धारणा को स्वीकार नहीं करता। वह न्याय के आदर्श को मानवीय विकास की मूल आवश्यकताओं के संदर्भ में उद्घाटित एवं संतुलित करता है। न्याय का सिद्धांत स्पष्टतः नैतिक और आर्थिक व्यवहार, सामाजिक

संगठन एवं राजनीतिक संरचना, विधि तथा सामाजिक नियंत्रण के अन्य रूपों के बीच एक बौद्धिक संतुलन की मांग करता है। भारतीय संविधान में अंतर्निहित न्याय का आदर्श कोई संकुचित विचार नहीं है, अपितु एक सर्वागीण अवधारणा है जो भारतीय समाज के प्रत्येक सदस्य का हित साधन करने के लिए मानव-मानव, समूह-समूह, समुदाय-समुदाय के मध्य एक सकारात्मक तथा रचनात्मक संबंध पर आधारित है।

"हम भारत के लोग भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न समाजवादी, पंथ-निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म तथा उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता प्राप्त कराने के लिए, तथा उसमें व्यक्ति की गरिमा एवं राष्ट्र की एकता तथा अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता को बढ़ाने के लिए दृढ़संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26.11.1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी संवत् दो हजार छह विक्रमी) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित एवं आत्मसमर्पित करते हैं।"

(डी.डी.बसु "कांस्टिट्यूशन ऑफ ला इंडिया" एस.सी. सरकार एण्ड सन्स प्रा. लि. कलकत्ता, 1977 पृष्ठ सं. 1-3 से लिया गया है)

यही भारतीय संविधान का अपना एक दर्शन है। इसमें लोकतंत्रात्मक गणराज्य का जो चित्र है, वह लोकतंत्र राजनीतिक एवं सामाजिक दोनों ही दृष्टिकोण से है। दूसरे शब्दों में, न केवल शासन में लोकतंत्र होगा बल्कि समाज भी लोकतांत्रिक होगा जिसमें 'न्याय, स्वतंत्रता, समता एवं बंधुता' की भावना होगी तथा सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करेगा।

पुलिस की भूमिका

न्याय प्रशासन एवं जनता के बीच सामंजस्य बनाए रखने में पुलिस का अहम योगदान है। यह कहना अनुचित न होगा कि न्याय-प्रशासन और पुलिस एक सिक्के के दो पहलू हैं अर्थात् दोनों ही एक-दूसरे के पूरक हैं। कहा जाता है कि पुलिस जनता की रक्षक है, संरक्षक हैं। अपराधियों पर अंकुश रखने तथा देश में शांति-व्यवस्था बनाए रखने में पुलिस की महत्वपूर्ण भूमिका है। मूल्यों की शृंखला में सबसे महत्वपूर्ण मूल्य न्याय का है। अतः न्याय-विभाग मानवीय मापदण्डों से स्थापित होता है; राज्य अधिकारों तथा कर्तव्यों का न्याय-निर्णयन करने के लिए और उनकी संरक्षा और प्रवर्तन को सुनिश्चित करने के लिए पुलिस विभाग/व्यक्तियों को नियुक्त करता है। इस प्रकार न्यायालय और पुलिस विभाग अस्तित्व में आते हैं।

फौजदारी प्रशासन के क्षेत्र में पुलिस की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जब न्यायालय अपराध के लिए दण्ड देता है तब पुलिस की ऐसे अभियुक्तों को हिरासत अथवा बंधन में रखने एवं अपराध का दण्ड व्यवहार में प्रयुक्त कराने का दायित्व निभाती है। न्याय-प्रशासन के न्यायिक कार्यों के क्रियान्वयन हेतु पुलिस की यह भूमिका हर सभ्यता के साथ आवश्यक रूप से जुड़ी है। वर्तमान समय में पुलिस को राज्य की "कार्यपालक नागरिक सेवा" का नाम दिया जाता है। हमारे देश में पुलिस-व्यवस्था की स्थापना के संबंध में व्यक्त दो प्रकार के विचारों में संविधान सभा के सदस्य ब्रजेश्वर प्रसाद की दलील थी "हमारे देश को आंतरिक तथा बाहरी दोनों प्रकार के खतरों को झेलना पड़ता है, ऐसी स्थिति में हम यह कहना चाहेंगे कि सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने की जिम्मेदारी केंद्रीय शासन की होनी चाहिए।" इस संशोधन का बाबा साहब अंबेडकर एवं उनके साथियों द्वारा विरोध किया गया तथा यह संशोधन प्रस्ताव जो कि केंद्र को मजबूती प्रदान करना चाहता था, गिर गया। तमाम बहसें होने से यह तथ्य उभरकर आया कि उसमें कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए किसी तरह

की केंद्रीय मशीनरी बनाने की बात सोची नहीं गई तथा सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने की जिम्मेदारी राज्यों पर मढ़ी गई।

भारत में वर्तमान राज्यों में पाए जाने वाले पुलिस संगठन प्राथमिक रूप से सन 1861 के पुलिस अधिनियम द्वारा शासित है। यहां यह कहना समीचीन होगा कि भारत में पुलिस अभी भी अपने उपनिवेशी रूप-रंग में जी रही है। हमारे विधान ने अपनी उन उत्तरदायित्वों से बचने की भरसक चेष्टा की है जो उसे भारतीय पुलिस ढांचे को बदलने के लिए करनी चाहिए थी।

अतः इस क्षेत्र में आपराधिक न्याय प्रदान करने वाली मशीनरी को दुबारा से गढ़ने की कोई कोशिश नहीं हुई, जिससे सामाजिक न्याय तथा मानवीय जीवन को सम्मान के साथ जिया जा सके। प्रभावशाली पुलिस संगठन व्यक्ति एवं समाज की पूर्ण आवश्यकता है। इस आधार पर भारत में इस प्रशासकीय संगठन को प्रभावशाली बनाया जाना आवश्यकता है।

❐

38वीं अखिल भारतीय पुलिस सांइस कांग्रेस एक विवरण

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो गृह मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली एवं राजस्थान सरकार पुलिस के संयुक्त सौजन्य से 38वीं अखिल भारतीय पुलिस सांइस कांग्रेस दिनांक 29 जनवरी से 31 जनवरी 2008 तक जयपुर में आयोजित की गई। इस कांग्रेस में मुख्यतः दो मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया गया—

(1) 2020 में भारतीय पुलिस का भावी स्वरूप

(2) विकसित देशों की पुलिस के साथ भारतीय पुलिस की तुलना

इस कांग्रेस का शुभांरभ श्री शिवराज वी. पाटिल माननीय केंद्रीय गृहमंत्री द्वारा 29 जनवरी को किया गया। इस समारोह में राजस्थान के महामहिम राज्यपाल श्री एस.के. सिंह, राजस्थान सरकार के गृहमंत्री माननीय श्री गुलाब चंद कटारिया के साथ अन्य अधिकारीगण व विशिष्ट अतिथिगण उपस्थित थे।

माननीय केंद्रीय गृहमंत्री जी ने अपने उद्घाटन संबोधन में इस सम्मेलन के आयोजन के लिए राजस्थान पुलिस की प्रशंसा करते हुए आतंकवाद से निपटने के लिए कठोर कानूनी प्रावधानों तथा निर्दोष व्यक्तियों के अधिकारों की सुरक्षा प्रदान करने में संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता पर बल दिया गया।

श्री गुलाब चंद कटारिया, गृह मंत्री राजस्थान सरकार ने अपने संबोधन में नए राजस्थान पुलिस अधिनियम में दिए गए प्रावधानों का उल्लेख किया। उनके अनुसार ढाई लाख नागरिक पुलिस के साथ सामुदायिक संपर्क समूह (सी एल जी) के सदस्य के रूप में कार्य कर रहे हैं और राजस्थान देश का ऐसा एकमात्र राज्य है जिसमें इन व्यक्तियों को एक कानूनी स्तर प्रदान किया गया है। उन्होंने भारत सरकार की पुलिस आधुनिकीकरण योजना के क्रियान्वयन में राजस्थान सरकार द्वारा की गई कार्रवाई जिसके फलस्वरूप समस्त राशि के लक्ष्यों के अनुसार सार्थक उपयोग के बारे में विवरण प्रदान किया।

श्री ए.एस. गिल, पुलिस महानिदेशक राजस्थान ने अपने स्वागत उद्बोधन में राजस्थान पुलिस द्वारा पुलिस कार्यप्रणाली में सुधार हेतु उठाए गए कुछ मौलिक सुधारों के विवरण से अवगत कराते हुए इनके सकारात्मक परिणामों पर प्रकाश डाला।

श्री के. कोशी. महानिदेशक, पु.अनु.वि.ब्यूरो ने मुख्य संयोजक के रूप में पुलिस सांइस कांग्रेस में उपस्थित सभी आगंतुको का स्वागत किया तथा पुलिस सांइस कांग्रेस की उत्पत्ति, ऐतिहासक पृष्ठभूमि एवं इसके महत्व पर प्रकाश डाला तथा कांग्रेस की विषय वस्तु से परिचित कराया जिसके अंतर्गत 14 शोध पत्रों को इस कांग्रेस के दौरान 7 सत्रों में प्रस्तुत किए जाने की प्रक्रिया के बारे में अवगत कराया।

श्री पाटिल ने राजस्थान पुलिस अकादमी की सराहना करते हुए पुलिस प्रशिक्षकों के लिए एक राष्ट्रीय पुलिस प्रशिक्षण संस्थान बनाने की आवश्यकता पर भी बल दिया। उन्होंने पुलिस अनुसंधान तथा विकास के क्षेत्र में निरंतर प्रयास करते रहने पर जोर दिया। साथ ही शैक्षणिक संस्थानों द्वारा भर्ती पूर्व प्रशिक्षण को अति आवश्यक माना। जिससे पुलिस सुधारों को एक निरंतर प्रक्रिया को बनाए रखने में सहायक सिद्ध होगी। राजस्थान सरकार द्वारा पुलिस सुधारों व क्षेत्र में उठाए गए अभिनव कदमों की सराहना करते हुए यह सुझाव दिया कि केंद्र व राज्य सरकारें पुलिस सुधार कार्यों पर समुचित संसाधनों

के निवेश को पुलिस सेवा की गुणवत्ता को आम नागरिकों की अपेक्षा तक लाने के लिए प्रयासरत कार्यक्रमों को महत्वपूर्ण बनाएं।

इस सम्मेलन में लगभग 100 प्रतिभागियों ने कांग्रेस की विषय वस्तु के विभिन्न आयामों पर विस्तृत चर्चा की जिसमें गृहमंत्रालय की ओर से श्री एम.एल कुमावत, विशेष सचिव (आई एस) गृह मंत्रालय, श्रीमती अनीता चौधरी अतिरिक्त सचिव (सी एस) गृह मंत्रालय तथा डा. यू.एन.वी. राव, परामर्शदाता गृह मंत्रालय ने इस कांग्रेस में भाग लिया।

गृह मंत्रालय की ओर से अतिरिक्त सचिव (सी एस) गृह मंत्रालय, श्रीमती अनीता चौधरी तथा डा. यू.एन.वी. राव जो कि प्रतिष्ठालब्ध सेवानिवृत भा.पु.से. के अधिकारी हैं और वर्तमान में गृह मंत्रालय में परामर्शदाता हैं, ने गृह मंत्रालय द्वारा प्रस्तावित राष्ट्रीय पुलिस मिशन की रूपरेखा प्रस्तुत की। इसमें पुलिस की विभिन्न प्रणालियों एवं उद्देश्यों की रूपरेखा तैयार कर उसको लागू करने की योजना बनाई जाएगी। अतिरिक्त सचिव (सी एस) गृह मंत्रालय को इसकी देख-रेख का कार्य दिया है जो मैदानी अधिकारियों से उपयुक्त सुझाव प्राप्त कर एक ऐसी न केवल कार्य योजना को तैयार करेंगे जिससे हमारे नागरिकों के लिए पुलिस सेवा में गुणात्मक सुधार परिलाक्षित हो बल्कि ऐसी सेवा जो नागरिकों की लोकतांत्रिक आकांक्षाओं को पूर्ण करने में भी सक्षम हो।

अपने समापन भाषण में श्रीमती वसुंधराराजे माननीय मुख्य मंत्री राजस्थान ने देश में पुलिस बलों द्वारा प्रयोग में लाई जा रही ब्रेन मैपिंग तथा नारको विश्लेषणों के और अधिक विकास को प्रोत्साहित करने के प्रस्ताव के संबंध में भी उल्लेख किया।

इस अवसर पर श्री के.कोशी, महानिदेशक, पु.अनु.वि.ब्यूरो ने अपने समापन संबोधन में सभी उपस्थित आगंतुकों का धन्यवाद किया तथा शोध पत्र प्रस्तुत करने वाले सभी बुद्धिजीवियों की प्रशंसा की। जिसमें विशेषकर श्री महेंद्ररेड्डी, पु.महानिरिक्षक, आंध्रप्रदेश, श्री कपिल गर्ग, पु.महानिरीक्षक, राजस्थान पुलिस, डा. सुमन कपूर, विट्ज पिलानी तथा श्री राजन गर्ग को कांग्रेस में उनके ज्ञानवर्धक प्रस्तुतिकरण के लिए आभार प्रकट किया। महानिदेशक, पु.अनु.वि.ब्यूरो ने मुख्य संयोजक के रूप में इस कांग्रेस में आयोजित विभिन्न विषयों पर हुए गहन विचार-विमर्श का सार प्रस्तुत किया-

1. पुलिस जनसंख्या दर, उपयुक्त आधारभूत संरचना तथा उसके रखरखाव के मानदंड, तकनीकी उत्पादों के लिए विनिर्देश/अपेक्षित मानदंडों के लिए नियमों को विकसित किया जाना।
2. अपराध, उनकी कार्य प्रणालियां, अपराधियों, संदेही व्यक्तियों के विवरण, जनसंख्या का विवरण, अंगुल छाप तथा अन्य जैव सांख्यिकीय पैरामीटर, वाहनों, शस्त्रों, टेलिफोन उपभोक्ता, राशन कार्ड धारकों के राष्ट्रीय तथा राजकीय स्तर पर आधारभूत आंकड़े स्थापित करना।
3. तकनीकी संस्थानों, प्रबंधन, विश्वविद्यालयों, कानूनी विश्वविद्यालयों आदि के मध्य नेटवर्किंग की स्थापना तथा अनुसंधान एवं विकास की दृष्टि से उन सभी का उस विषय के विशेषज्ञों की राय से अवगत कराना।
4. सामुदायिक पुलिसिंग तथा शैक्षणिक कार्यक्रमों को प्रारंभ करने की आवश्यकता।
5. पुलिस कांस्टेबलों को और अधिक शक्तियां प्रदान करना।
6. पुलिस कार्य सेवा के लिए 8 घंटे की शिफ्ट निर्धारित करना ताकि वे अपने परिवार को पर्याप्त समय दे सकें साथ ही सामाजिक स्तर पर उनकी स्थिति को और अधिक महत्व दिलाने की आवश्यकता।
7. भारतीय पुलिस अधिकारियों को आवश्यक रूप से सभी प्रमुख देशों की पुलिस प्रणालियों से अवगत कराना ताकि वे उन देशों में समाज को अपराधियों

से निपटने के लिए अपनाई जा रही विधियों की जानकारी रखें तथा साथ ही राष्ट्रीय सीमाओं पर हो रही गतिविधियों से वे अंजान न हों।

8. प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों एवं शैक्षणिक संस्थानों में पुलिस से संबंधित विषयों की आवश्यकता को स्थापित किया जाना। श्री ए.एस.गिल, महानिदेशक, राजस्थान पुलिस अध्यक्ष संयोजन समिति के धन्यवाद ज्ञापन के साथ कांग्रेस समाप्त हुई।

—रमेश चंद्र अरोड़ा

❐❐❐

लेखकों से निवेदन

यदि पुलिस विज्ञान में प्रकाशन के लिए आपके पास पुलिस, शांति-व्यवस्था, अपराध न्याय-व्यवस्था आदि पर कोई लेख है या आप लेख लिखने में सक्षम हैं तथा रुचि रखते हों तो अपने लेख यथा शीघ्र भेजें। अच्छे लेखों को प्रकाशित करने का हमारा पूरा प्रयास रहेगा। लेख टाइप किया होना चाहिए तथा इसके संबंध में फोटो, चार्ट आदि हों तो उन्हें भी साथ भेजना चाहिए। प्रकाशित होने वाले लेखों पर समुचित पारिश्रमिक की व्यवस्था है।

यदि आपने पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी विषय पर उपयोगी पुस्तक लिखी है और आप पुलिस विज्ञान में उसे कड़ी के रूप में प्रकाशित करवाना चाहते हैं तो हमें पांडुलिपि भेजें।

यदि आप कर्मियों के कार्य को लेकर कहानी या अन्य किसी विधा में लिखने में रुचि रखते हों तो हम ऐसे साहित्य का भी स्वागत करेंगे।

यदि पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी हिन्दीतर भाषा के उच्चस्तरीय लेख का अनुवाद किया हो और आपके पास अनुवाद प्रकाशन का कापीराइट हो अथवा उनके कापीराइट की आवश्यकता न हो तो ऐसे लेख/सामग्री भी प्रकाशनार्थ आमंत्रित हैं। प्रकाशित लेखों पर समुचित मानदेय देने की व्यवस्था है। लेख भेजते समय यह प्रमाणित करें कि लेख मौलिक/अनूदित व अप्रकाशित है तथा इस पर कोई मानदेय नहीं लिया गया है। अनूदित लेख के कापीराइट के संबंध में भी सूचित करें।

विषय आदि के बारे में विस्तृत जानकारी के लिए पुलिस विज्ञान की नमूने की प्रति मंगाने के लिए संपर्क करें :--

संपादक
पुलिस विज्ञान
पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, चौथी मंजिल
सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003
फोन : 24360371 एक्स. 253

वैब साइट — डब्लू डब्लू डब्लू.बीपीआरडी.जीओवी.इन
डब्लू डब्लू डब्लू. बीपीआरडी.एनआईसी.इन

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, ब्लाक नं. 11, 3/4 मंजिल, सी.जी.ओ. कम्प्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद, (हरियाणा) द्वारा मुद्रित।

पुलिस विज्ञान

(त्रैमासिक पत्रिका)
अप्रैल-जून, 2008

सलाहकार समिति

के. कोशी
महानिदेशक

रमेशचंद्र अरोड़ा
निदेशक (अनु. एवं वि.)

संजय बेनिवाल
उपनिदेशक

डा. बद्री विशाल त्रिवेदी
सहायक निदेशक

संपादक : **दिवाकर शर्मा**

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, 3 एवं 4 मंजिल
सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003

वर्ष - 25 अंक 103 अप्रैल-जून, 2008

वर्ष - 25 अंक 103 अप्रैल-जून, 2008

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना के अंतर्गत ब्यूरो द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

क्र. सं.	*पुस्तक का नाम*	*लेखक का नाम*	*मूल्य*
1.	**भारतीय पुलिस का इतिहास** (अतीत काल से मुगल काल तक)	डा. शैलेन्द्र चतुर्वेदी	54/-
2.	**भारत में केन्द्रीय पुलिस संगठन**	श्री एच. भीष्मपाल	65/-
3.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री रामलाल विवेक	65/-
4.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री शंकर सरौलिया	70/-
5.	**विकासशील समाज में समसामयिक पुलिस की भूमिका**	श्री आर.एस. श्रीवास्तव	105/-
6.	**स्वातंत्र्योत्तर भारत में पुलिस की भूमिका एवं जनता का दायित्व**	डा. कृष्णमोहन माथुर	210/-
7.	**मादक पदार्थ एवं पुलिस की भूमिका**	श्री हरीश नवल	—
8.	**सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में पुलिस की भूमिका का उद्‌भव**	प्रो. मीनाक्षी स्वामी	—
9.	**समग्र न्याय-व्यवस्था में पुलिस का स्थान एवं भूमिका**	श्री ललितेश्वर	600/-
10.	**पुलिस दायित्व एवं नागरिक जागरूकता**	डा. सी. अशोकवर्धन	568/-
11.	**महिला और पुलिस**	श्रीमती अमिता जोशी	100/-
12.	**मानवाधिकार और पुलिस**	डा. जी.एस. वाजपेयी	346/-
13.	**नई आर्थिक नीति एवं अपराध**	डा. अर्चना त्रिपाठी	183/-
14.	**बाल अपराध**	डा. गिरिश्वर मिश्र	225/-
15.	**न्यायालयिक विज्ञान की नई चुनौतियां**	डा. शरद सिंह	200/-
16.	**मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस**	श्री रामकृष्ण दत्त शर्मा एवं डा. सविता शर्मा	510/-
17.	**सामुदायिक पुलिस व्यवस्था**	डा. तपन चक्रवर्ती डा. रवि अम्बष्ट	205/-
18.	**संगठित अपराध**	श्री महेन्द्र सिंह आदिल	313/-
19.	**पुलिस कार्यों का निजीकरण**	डा. शंकर सरौलिया	330/-
20.	**साइबर क्राइम**	डा. अनुपम शर्मा	450/-

ब्यूरो द्वारा प्रकाशित उपरोक्त सभी पुस्तकें, नियंत्रक, प्रकाशन विभाग, सिविल लाइंस, दिल्ली-110054 से प्राप्त की जा सकती हैं।